चन्दामामा
दिसम्बर १९८०

जीवन और हनु प्रस्तुत करते हैं:
विश्व के सबसे अनोखे आकार
सबसे ठिगने व्यक्ति के बारेमें जहां तक जानकारी है वह हालैंड की पोलिन मस्टर्स थी। 19 वर्ष की आयु में उसका कद केवल 23.2 इंच था।
विश्व में सबसे वजनदार मानव अमेरिका का रोबर्ट ह्यूज था। 11.14 पाउन्ड के शिशु का वज़न बड़े होने पर बढ़ते बढ़ते 1069 पाउन्ड हो गया था।
सबसे लम्बी गरदन: इसमें रिकार्ड बर्मा की पाडोंग कबीले की एक महिला का है जिसकी गरदन 15¾ इंच लम्बी है। उसकी गरदन के चारों ओर तांबे की कुण्डलियां लपेटी गयी हैं ताकि गरदन लम्बी होती रहे।
विश्व में सबसे लम्बा मानव अमेरिका का रोबर्ट वाडलो हुआ था। उसकी ऊंचाई 20 वर्ष की आयु में 8 फीट 11.1 इंच थी।
विश्व मे सबसे हल्के व्यक्ति का रिकार्ड मेक्सिको की लूसिया जराटे का है। जन्म के समय 2½ पाउन्ड; 20 वर्ष की आयु में भी वजन केवल 13 पाउन्ड ही था।
जीवन बीमा आपके भविष्य को सुरक्षित बनाने का सबसे अचूक रास्ता है।
इसके बारे में और जानकार हो जाइये।
भारतीय जीवन बीमा निगम
अगली बार दोनों प्रस्तुत करते हैं: मानव जैसे जीव-जन्तु
daCunha-LIC-101 HN-

Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 16 (Hindi)

1st Prize: Bhim Dath Sharma, Chandigarh. *2nd Prize:* S. Tharkeswar, Balasore. *3rd Prize:* Sudha I. Vasu, Bombay-67. *Consolation Prizes:* Anjani Khare, Lucknow; K. M. Neerja Sehgal, Tehri; Lala Ram Kashyap, Darla; Sankar Mahanta, Duliajam; Pankaj Madhusudan Chitnis, Dombivali (East).

वुडवर्ड्स ग्राइप वाटर

CAS/OPPL/3/80 HIN

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "सही निर्णय" है। "सच्चे भोक्ता" नामक कहानी के द्वारा हमें यह विदित होता है कि दान पर निर्भर हो जीनेवाले साधू-सन्यासी तथा लूले, लंगड़े व गरीब लोगों के बीच का अंतर क्या है? अपात्र दान मजाक़ का कारण बन जाता है।

अमर वाणी

प्रमाणा दधिकस्यापि, गंडश्याम मदच्युते:,
पदं मूर्ध्नि समाधत्ते, केसरी मत्त दंतिन: ।।

[हाथी अपनी आकृति और शक्ति में बड़ा होने पर भी साहस और पराक्रम के कारण छोटा होते हुए भी सिंह हाथी के कुंभस्थल को फोड़ पाता है।]

वर्ष : ३३ **दिसम्बर १९८०** **अंक : ४**

एक प्रति : १-५० **: :** **वार्षिक चन्दा : १८-००**

एम. वासुदेवमूर्ति, खम्मम (आं. प्र.)

प्र : आदि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि–ये वार कैसे बने?

उ : सात दिनों का कालमान सहज कालमानक नहीं है। इस समय अमल में स्थित सात दिनों के ये नाम किसी सभ्यता के साथ पैदा हुए होंगे। इसके अंदाज के कई कारण हैं। एक तो हमारे पूर्वजों के लिए सात की संख्या पवित्र है–जैसे : सप्तर्षि, सप्त होता, सूर्य के सप्त अश्व, सप्त मातृ, सप्त समुद्र वगैरह। दूसरा–प्राचीन खगोल शास्त्रियों ने सात ग्रहों को पहचान लिया है–जैसे : सूर्य, चन्द्र, अंगारक, बुध, गुरु, शुक्र और शनि। शायद ये ही नाम सप्ताह के दिनों के लिए रखे हो। आज हम सूर्य को ग्रहमण्डल के केन्द्र के रूप में तथा चन्द्रमा को उपग्रह के रूप में मानते हैं, फिर भी सप्ताह के दिनों के नाम बदले नहीं।

श्रीनंदा, बेंगलूर (कर्नाटक)

प्र : आकाश गंगा से क्या तात्पर्य है?

उ : आकाश में नक्षत्रदल बांधे रहते हैं! हम सूर्य के कुटंब में हैं। सूर्य जैसे नक्षत्र कुछ हजार करोड़ एक ब्राह्मण्ड के रूप में हैं। वही आकाश गंगा है। सूर्य आकाश गंगा के केन्द्र से दूर है। हम जब केन्द्र की दिशा में देखते हैं, तब अधिकांश नक्षत्र केन्द्रीकृत दिखाई देते हैं। उसी को हम आकाश गंगा कहते हैं!

एम. सुकुमार जैन, शिवमोग्गा (कर्नाटक)

प्र : जैसे चन्द्रमा हमें एक गोल के रूप में दिखाई देते हुए रोशनी पैदा करता है, वैसे पृथ्वी चन्द्रमण्डल को दिखाई देती है?

उ : हाँ, दिखाई देती है। चन्द्रमा की दिशा से पृथ्वी का रंगीन फोटो लिया गया है। चन्द्रमा से पृथ्वी बहुत बड़ी है, इसलिए अगर हम चन्द्रमा पर से पृथ्वी को देखते हैं तो वह बहुत बड़ी दीखती है, हमारी अमावास्या का दिन चन्द्रमा के लिए पूर्णिमा का दिन है, याने चन्द्रमा पर से देखनेवालों को पृथ्वी पूर्ण बिंब तथा अत्यंत प्रकाशमान दिखाई देती है।

[८९]

मेघवर्ण तथा अन्य कौओं की चिल्लाहटों को सुनकर जलपक्षी घबरा गये और क़िले को छोड़ कंदकों में छिप गये ।

चित्रवर्ण का सेनापति मुर्गा हिरण्यगर्भ तथा उसके सेनापति सारस को घेरकर सताने लगा । सारस जब हिरण्यगर्भ की रक्षा करने गया, तब वह बोला–"मुझे अपनी क़िस्मत पर छोड़ दो, पर मेरे पुत्र चूडामणि का राज्याभिषेक करो ।"

"मैं आप को विश्वास दिलाता हूँ कि मेरे बदन में प्राणों के रहते दुश्मन आप की कोई हानि नहीं कर सकेगा ।" यों कहते सारस ने मुर्गे के सारे प्रयत्नों को विफल बनाया । तब हिरण्यगर्भ को कंदक में ढकेल दिया । इसके बाद सारस ने मुर्गे के साथ भयंकर युद्ध करके उसे मार डाला । मगर पृथ्वी पर के पक्षियों ने एक साथ हमला करके उस युद्ध में बगुले को मार डाला ।

आखिर चित्रवर्ण की विजय के साथ युद्ध समाप्त हो गया । जय-जयकारों के बीच चित्रवर्ण ने क़िले में प्रवेश किया ।

शांति

हिरण्यगर्भ ने अपने अनुचरों से पूछा–"हमारे क़िले के घरों पर जो शोले जल रहे हैं, उन्हें गिरानेवाले क्या हमारे दुश्मन तो नहीं हैं ? या दुश्मन के द्वारा नियुक्त क़िले के लोग ही हैं ?"

सर्वज्ञ ने जवाब दिया–"आप के परम मित्र मेघवर्ण तथा उसके अनुचर दिखाई नहीं देते । शायद उन्हीं लोगों ने यह काम किया है ।"

"यह सब हमारी क़िस्मत है ! हमारा दुर्भाग्य है ।" राजा ने कहा ।

"दुर्भाग्य की आप निंदा क्यों करते हैं? जो अच्छे हितैषियों की सलाह नहीं सुनते, वे यों विपदाओं के शिकार हो जाते हैं।" सर्वज्ञ ने कहा।

इतने में एक दूत के जरिये यह समाचार मिला कि कर्पूर द्वीप को हराने में सहायता पहुँचानेवाले मेघवर्ण (कौआ) को चित्रवर्ण ने राजा बनाना चाहा, दूरदर्शन ने इसका घोर विरोध किया। साथ ही उसने सलाह दी कि नीच व्यक्ति को जिम्मेदारी का पद नहीं देना चाहिए, मगर उसे सोना तथा अन्य चीज़ें उपहार में दे दीजिए! इस पर चित्रवर्ण ने समझाया कि कौए को राजा बनाने पर वह रोज उसे काश्मीरी शाल, फल आदि भेजा करेगा। तब गीध ने उसे लोभ में न पड़ने की चेतावनी दी।

"तब तो मैं क्या करूँ?" मयूर राजा ने गीध से पूछा।

इसके जवाब में गीध ने सलाह दी– "आप हंस राजा के साथ शांति का समझौता करके विन्ध्याचल को लौट जाइये। बरसात के मौसम तक अगर आप यहीं रहें, तो फिर लड़ाई होगी और उसमें हमारा भारी नुक़सान होगा। क़िले पर फतह करने का यश तो हमें मिल ही गया है। उससे हम क्यों वंचित रहें? जब दोनों पक्ष समान रूप से ताक़त रखते हैं, तब कभी कभी दोनों पक्षों का सर्वनाश हो जाता है। इसलिए शक्ति में हमारी

बराबरी करनेवाले हिरण्यगर्भ के साथ हम संधि कर लेंगे।"

विजय के घमण्ड में चूर चित्रवर्ण ने पराजित शत्रु के साथ संधि करना और शाश्वत रूप से मित्रता करना पहले पसंद नहीं किया। इसलिए हिरण्यगर्भ के मंत्री ने जंबू द्वीप में अपने नये सेनापति सारस के पुत्र को भेजकर वहाँ पर अराजकता फैलाई और सिंहल द्वीप को जंबू द्वीप पर हमला करने को उकसाया।

इस पर गीध ने मयूर राजा से मेघवर्ण (कौए) की सलाह मांगने को सुझाया। कौए ने हंस राजा के साथ समझौता करने की सलाह देते हुए कहा–"वहाँ के राजा और मंत्री भी बड़े ही उत्तम स्वभाव के हैं।"

"तब तो तुम उस राजा और उसके मंत्री को भी कैसे धोखा दे सके?" मयूरराजा ने कौए से पूछा।

"महाराज, आप पर विश्वास रखनेवाले महात्माओं को धोखा देने में बड़प्पन ही क्या है? यह तो ऐसा है, जैसे कि आप की गोद में सोनेवाले की हत्या आसानी से की जा सकती है। सज्जन व्यक्ति दुष्ट व्यक्ति को अपने ही जैसे जब मानता है, तब उसे धोखा देना बड़ा ही आसान है। इतने मात्र से मेरी सलाह अच्छी क्यों नहीं हो सकती?" कौए ने कहा।

"मेघवर्ण, तुम इतने दिन तक उनके बीच उनके प्रति विनम्रता दिखाते हुए

कैसे रह सके?" मयूर राजा ने कौए से फिर पूछा।

"अपना काम सफल बनाने के लिए मुझे रहना ही पड़ा। इसलिए आप कृपया मेरी बात मानकर हिरण्यगर्भ के साथ समझौता कर लीजिए।" कौए ने सुझाया।

सर्वज्ञ ने इसे माना। पर मयूर राजा ने कहा—"मेरे हाथों में पराजित हंसराजा मेरी आज्ञा को मानते हुए मुझे वार्षिक शुल्क तो अदा करते रहे।"

इतने में जंबू द्वीप से आये हुए तोते ने मयूर राजा को बताया कि सिंहल द्वीप का राजा जंबू द्वीप पर हमला कर बैठा है।

गीध ने उत्साह में आकर कहा—"सर्वज्ञ, तुमने बड़ा अच्छा काम किया।"

"मैं तुरंत विन्ध्याचल में जाकर उसका अंत देखूँगा।" मयूर राजा ने कहा।

"महाराज, क्रोध करने से कोई फ़ायदा नहीं है। ठीक से सोचे-विचारे बिना जो काम कर बैठते हैं, उनसे विपदाएँ पैदा होती हैं।" सर्वज्ञ ने कहा।

मयूर राजा को यह बात उचित मालूम हुई। उसने गीध को सुझाया कि वह शांति के समझौते का प्रबंध करे। इस पर दूरदर्शन हिरण्यगर्भ के पास शांति पूर्ण समझौते का दूत बनकर चला गया।

इस पर हिरण्य गर्भ ने सर्वज्ञ से पूछा—"यह एक और कपट चाल तो नहीं है?"

"नहीं, गीध तो उत्तम स्वभाव का है। उचित उपहारों के साथ हम उसका स्वागत करेंगे।" सर्वज्ञ ने उत्तर दिया।

गीध ने सर्वज्ञ से कहा—"हम दोनों हमारे राजाओं के बीच शांति पैदा करेंगे। एक हज़ार अश्वमेध यज्ञों से सत्य पर आधारित शांति कहीं अच्छी होती है।"

सर्वज्ञ ने प्रसन्नता पूर्वक गीध की बात मान ली। दोनों राज्यों के बीच शांति का समझौता हुआ। इसके बाद बिना किसी प्रकार की अशांति के चित्रवर्ण जंबू द्वीप में, हिरण्यगर्भ कर्पूर द्वीप में तथा मेघवर्ण सिंहल में राज्य करने लगे।

(समाप्त)

[७]

[पूर्वी तट पर रहनेवाली अपनी नावों के पास पहुँचने के लिए समरसेन और उसके सैनिक चल पड़े, लेकिन अग्नि पर्वत की ज्वालाओं की वजह से वे दूसरी दिशा में मुड़े। रास्ते में उन्हें पेड़ से औंधे मुँह लटकनेवाला एक जंगल का निवासी दिखाई दिया। रास्ते में मनुष्यों के पैरों के चिन्ह हाथियों के पैरों के पड़ने से गायब हो गये थे। बाद...]

समरसेन अपने सैनिकों को हिम्मत बंधाकर एक बार और वह पत्थरोंवाले टीले की ओर चल पड़ा। उस टीले पर से देखने पर शायद जंगलियों की कोई बस्ती दिखाई दे, इस आशा से उसने फिर एक बार चारों तरफ़ नज़र दौड़ाई। मगर उसे कहीं भी मनुष्यों के निवास के चिह्न दिखाई न दिये। समरसेन और उसके सैनिकों के सामने अब ये ही सवाल थे कि इस वक़्त किस मार्ग का अनुसरण करे? समरसेन एक पेड़ के तने से सटकर अपने आगे के कर्तव्य के बारे में सोचने लगा। पर उसे कोई उपाय न सूझा।

ऐसी हालत में उन सब को चकित कर देनेवाला एक आर्तनाद सुनाई दिया। वह कंठस्वर न एकाक्षी का था और न चतुर्नेत्र का ही। बड़ी आफ़त में फंसे एक मानव का आर्तनाद था वह।

सैनिकों ने अचरज में आकर अपने नेता की ओर देखा। समरसेन ने झट म्यान से तलवार खींचकर कहा–"चलो, पर सावधान रहो।" फिर उस आर्तनाद की दिशा में सब लोग दौड़ पड़े।

सैनिकों ने भी तलवारें खींचकर अपने सेनापति का अनुसरण किया। ज्यों ज्यों वे लोग आगे बढ़ते गये, त्यों-त्यों मानव का कंठ साफ़ सुनाई देने लगा। थोड़ी देर में वे लोग उस प्रदेश में पहुँचे। वहाँ पर उन लोगों ने जो भयंकर दृश्य देखा, उस दृश्य ने उन्हें कंपा दिया। दूसरे ही क्षण किसी आशा की किरण ने उनके दिलों में उत्साह भर दिया। उन लोगों ने उस भयानक मांत्रिक द्वीप में पहली बार एक जीवित मानव को देखा। जो बड़ी भारी विपदा में फंसा हुआ था।

कोई उस मानव के हाथों को मरोड़कर एक पेड़ से बांधकर चला गया था। उस असहाय स्थिति में उसे खाने के वास्ते चार-पांच भेड़िये वहाँ पर आ पहुँचे। उसी वक़्त एक भूखा बाघ भी उधर से आ निकला। अब उस अभागे मानव का मांस खाने के लिए उन भेड़ियों तथा भूखे बाघ के बीच लड़ाई हो रही थी। भय-कंपित हो वह मानव जोर से चीख रहा था।

समरसेन ने पल भर में हालत भांप ली। बाघ के पंजे की मार खा-खाकर एक एक भेड़िया चिल्लाकर दूर गिरता जा रहा था। इस प्रकार सारे भेड़ियों को मारकर इतमीनान से बाघ मनुष्य के मांस को चखने की सोच रहा था। समरसेन ने सोचा कि विलंब करने से खतरा पैदा हो सकता है, उसने धनुष पर तीर चढ़ाकर बाघ का निशाना बना करके तीर छोड़ दिया। तीर की चोट खाकर बाघ गरजते हुए उछलकर नीचे गिर पड़ा।

ऐसी हालत में थोड़ा भी विलंब किये बिना सैनिक आगे कूद पड़े। तभी भूखे भेड़िये चिल्लाते हुए उन पर हमला कर बैठे। मगर जरा भी विचलित हुए बिना

सैनिकों ने अपनी तलवारों से भेड़ियों को मार डाला। इस बीच समरसेन वहां पर आया, उसने पेड़ से बंधे मानव के बंधनों को काट डाला।

"आप महानुभावों ने सचमुच मुझे प्राणों से बचाया। आप के इस उपकार को मैं ज़िंदगी भर भूल नहीं सकता।" इन शब्दों के साथ उस मानव ने समरसेन तथा सैनिकों को भी प्रणाम किया।

उस मानव की रूप रेखाएं तथा उसकी बातचीत का ढंग देखने पर समरसेन को लगा कि वह मनुष्य मांत्रिक द्वीप का निवासी नहीं है; कुंडलिनी द्वीप का निवासी होगा। फिर समरसेन ने पूछा—"भाई, यह बताओ, तुम किस देश के निवासी हो?"

"मैं......कुंडलिनी द्वीप का सैनिक हूँ। उस राज्य के सेनापति समरसेन आप ही हैं न?" उस मनुष्य ने पूछा।

यह सवाल सुनने पर समरसेन तथा उसके सैनिकों को जो आश्चर्य हुआ, वह कल्पना के बाहर की बात है। सब लोग यह जानते थे कि वह नया व्यक्ति उनके साथ नाव पर आया नहीं है; पर वह इस द्वीप में कैसे आ गया है?

नये सैनिक ने कहा—"आप लोग जिस दिन नावों पर निकल पड़े, उस वक़्त धूमकेतु दिखाई दिया था न? फिर भी आप लोग

दरबारी ज्योतिषी की सलाह की परवाह किये बिना चल पड़े। इसके थोड़ी देर बाद बड़ी आंधी उठी, समुद्र में हलचल मच गई। इस पर महाराजा चित्रसेन घबरा गये। उन्होंने लगातार चार-पांच दिन तक आप लोगों के कुशल-क्षेम की कामना करते कुंडलिनी देवी की पूजा-अर्चनाएँ करायीं, उत्सव भी मनाये।

लेकिन तूफान एक सप्ताह तक भयंकर रूप से चलता रहा। राजा और प्रजा भी यह सोचकर चिंता में डूब गये कि न मालूम आप लोगों पर क्या बीता होगा।

अंत में महाराजा चित्रसेन ने दरबारी ज्योतिषी के द्वारा अंजन लगवाकर यह पता तो लगवा लिया कि आप लोग कहाँ पर और किस हालत में हैं! एक शुभ मुहूर्त में ज्योतिषी ने अंजन लगाकर देखा, तब यह मालूम हुआ कि कुछ नौकाएँ डूब गई हैं और बाक़ी नौकाओं में कुछ लोग किसी द्वीप में लग गये हैं।

महाराजा ने मंत्री व सामंतों के साथ परामर्श किया। अंत में यह निश्चय कर लिया गया कि थोड़े से सैनिकों के साथ आप किसी अजनबी द्वीप में पहुँचने पर आप सब को ख़तरों में फंस जाने की संभावना है। उसके एक हफ़्ते बाद कुछ और सैनिकों को इकट्ठा करके कुंभाड के नेतृत्व में आप लोगों को ढूँढ़ने के लिए कुछ सैनिकों को भेजा।"

नये सैनिक के मुँह से यहाँ तक सुनने के बाद सेनापति समरसेन की भृकुटियाँ तन गईं। उसने पूछा—"यह कुंभांड कौन है?" फिर किसी बात की याद करके बोला—"ओह, कुंभांड राज्य का सामंत है न?"

"जी हाँ, वही! उसी की वजह से मैं यों जान के ख़तरे में फंस गया हूँ।" नये सैनिक ने दांत पीसते हुए जवाब दिया।

सैनिक की बातें सुन समरसेन विस्मय में आ गया। पास में खड़े सैनिकों की समझ में ये सारी बातें न आईं। नया सैनिक फिर यों सुनाने लगा: "नावों में

निकलने के थोड़े दिन बाद हमने इस द्वीप को देखा। द्वीप के दक्षिणी प्रदेश में नावों से उतरकर हम किनारे पहुँचे। कुंभाण्ड ने हम सब को किनारे पर ही रहने का आदेश दिया और वह दो सैनिकों के साथ द्वीप के अन्दर चल पड़ा।

हमने सारा दिन उसके इंतजार में बिता दिया। दूसरे दिन सवेरे कुंभाण्ड अकेले ही लौट आया। उसने हमारे हाथ के सारे धनुष-बाण लेकर गठरी बंधवा दी और उन्हें समुद्र में फेंकवा दिया। कारण पूछने पर यही बताया कि यह मेरा आदेश है, तुम लोगों को मुझसे किसी बात का कारण जानने का हक़ नहीं है। हम लोगों ने बहुत-कुछ सोचा, मगर कुंभाण्ड की इस विचित्र करनी का कारण हमारी समझ में न आया। उल्टे उसके साथ जो दो सैनिक द्वीप के अन्दर चले गये थे, उनका भी कुछ पता न चला। बार-बार जोर देकर पूछने पर उसने यही बताया कि उन दोनों को किसी जंगली जाति के लोगों ने मार डाला है।

यह जवाब सुनते ही हम लोगों के मन में संदेह पैदा हुआ। तब हमने उसे डांटकर पूछा कि तुमने हमारे सारे धनुष और बाणों को गठरी बंधवाकर समुद्र के अंदर क्यों फेंकवा दिया? इस पर कुंभाण्ड

आपे से बाहर हो गया। उसने कठोर स्वर में यही जवाब दिया कि एक सेनापति के रूप में वह जो भी काम करेगा, उससे इसका कारण पूछने का किसी को कोई अधिकार नहीं है।"

इस पर समरसेन ने नये सैनिक को बीच में ही टोकते हुए पूछा—"तब तो क्या कुंभाण्ड ने भी अपने धनुष-बाणों को समुद्र में फेंक दिया है?"

"सेनापतिजी! यही एक रहस्य की बात है। कुंभाण्ड ने अपने धनुष-बाणों को अपने ही पास रख छोड़ा है। इसके थोड़ी देर बाद ढाल व भाले लेकर कुछ जंगली लोग भयंकर रूप से चिल्लाते

CHITRA

हमारी ओर बढ़ने लगे। हमारे पास हथियार न थे। इसलिए हमारे हाथ जो भी पत्थर व पेड़ों की डालें आईं, उनसे हम अपनी आत्मरक्षा करने लगे।

"मगर कुंभाण्ड ने हम सब को जंगली लोगों के हाथों में आत्म-समर्पण करने का आदेश दिया। इस विचित्र आदेश ने हमें आश्चर्य में डाल दिया। हम में से कई लोग इसके पहले ही भालों के शिकार हो जान खो बैठे थे। बाक़ी हम लोग भाग भी नहीं सके, इसलिए हम उनके अधीन हो गये।" सैनिक ने समझाया।

"ऐसी भयंकर लड़ाई चल रही थी तो क्या कुंभाण्ड ने तुम लोगों की कोई मदद नहीं की?" समरसेन ने क्रोध में आकर पूछा।

"नहीं, बिलकुल नहीं की। ज्यों ही हमने आत्म समर्पण किया, त्यों ही जंगलियों ने हमारे हाथ-पैर बांध दिये। कुंभाण्ड को एक पालकी जैसे वाहन पर बिठाया गया। उसे अपने कधों पर रखे कुछ जंगली लोग बड़े ही उत्साह के साथ चिल्लाते-नारे लगाते अपनी बस्तियों की ओर ले गये। हम उनके बन्दी बनकर रह गये। कुंभाण्ड ऐसा व्यवहार करने लगा, मानो वह उन जंगलियों का राजा है। वे जंगली लोग कुंभाण्ड की हर बात को अपने देवता की आज्ञा के बराबर मानने लगे। हमारी समझ में न आया कि कुंभाण्ड ने उन जंगलियों पर ऐसा अधिकार कैसे प्राप्त कर लिया!" नये सैनिक ने कहा।

समरसेन थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब बोला—"मेरी भी समझ में नहीं आ रहा है। हाँ, इसके बाद क्या हुआ?"

"कुंभाण्ड के बारे में हमें जो संदेह हुआ था, उसका जवाब हमें दो-तीन दिनों में ही मिल गया। जंगली लोग इतने पिछड़े थे कि उन्हें तीर-कमान तक का ज्ञान नहीं है। मनुष्य एक जगह खड़े हो किसी चिड़िया या जानवर को तीर-कमान

से मार डालता है तो वह उनकी नज़र में एक अद्भुत कार्य जैसे लगा। कुंभाण्ड ने उन्हें समझाया कि यह महिमा सिर्फ़ वह अकेला ही रखता है। इसी ख्याल से जंगलियों पर अपना अधिकार जमाने के लिए उसने हमारे सारे धनुष और बाणों को गठरी बंधवाकर समुद्र में फेंकवा दिया।" सैनिक ने कहा।

"इसके बाद क्या हुआ?" समरसेन ने फिर पूछा।

"एक दिन सारा जंगल अचानक डफलियों की आवाज़ से गूँज उठा। सैकड़ों की संख्या में जंगली जातियों के लोग हमारी बस्ती में आ पहुँचे, जहाँ पर हम लोग बन्दी थे। उन सब के सामने उस दुष्ट कुंभाण्ड ने अपने अद्भुत कार्य का प्रदर्शन किया। कहीं आसमान में ऊपर उड़नेवाले गरुड पक्षी को उस तीर से नीचे गिराया। दूर पर भागनेवाले एक हिरण पर बाण चलाकर उसे मार गिराया। इस पर सारे जंगली लोग अचरज में आ गये और कुंभाण्ड को घेरकर नाचने लगे। उनकी मदद से कुभाण्ड सारे द्वीप का राजा बनने का सपना देख रहा है।" नये सैनिक ने समझाया।

समरसेन ने मुस्कुराकरा कहा—"इस द्वीप पर राज करने के लिए है ही क्या? सिर्फ़ यहाँ पर जंगली जानवर, अग्नि पर्वत और एक-दो मांत्रिक हैं।"

"मांत्रिक हैं?" इस शब्द को दुहराते हुए सैनिक डर के मारे कांप उठा, फिर चारों तरफ़ एक बार नज़र दौड़ाकर बोला—"हमने मांत्रिकों के बारे में जंगलियों के मुँह से थोड़ा-बहुत सुना है, लेकिन..."

नया सैनिक कुछ और सुनाने जा रहा था, इस बीच उन्हें किसी की गंभीर आवाज़ सुनाई दी—"सुनना क्या, प्रत्यक्ष देख भी सकते हो।" इसके बाद कुछ ही क्षणों में चतुर्नेत्र मांत्रिक अपनी गुच्छेदार टोपी को हाथ में लिये उनके सामने आ खड़ा हुआ।

(और है)

सही निर्णय

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने पूछा—"इस अर्द्ध रात्रि के समय आप ने इस शव को ढोने का निर्णय किया, मैं इसे गलत नहीं मानता। मगर राजाओं के निर्णय हमेशा सही नहीं होते। इसके उदाहरण के रूप में मैं आपको ज्ञानशील नामक एक राजा के द्वारा निर्दयता पूर्वक दो डाकुओं को दण्ड देने की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: ज्ञानशील जब मगध की गद्दी पर बैठे, उस वक़्त सारे देश में अराजकता फैली हुई थी। अनीति का बोलबाला था। जनता का जीवन नरक तुल्य बन गया था। ज्ञानशील ने सिर्फ़ दंडनीति का सहारा लेकर देश के

बेताल कथाएँ

अपराधियों को दबाया और जनता का जीवन कुछ हद तक सुधर गया। लेकिन ज्ञानशील का प्रयत्न पूर्ण रूप से सफल न हुआ। भारी डाके पड़ रहे थे। लेकिन ये डाके साधारण जनता को सतानेवाले न थे। लुटनेवाले लोग अमीर थे। राजा को पता चला कि जो धन लूटा जा रहा था, वह गरीबों में बांटा जा रहा है।

अलावा इसके राजा ने यह कल्पना की कि ये चोरियाँ करनेवाले एक नहीं, दो होंगे। क्यों कि एक ही समय में एक ही दफ़े दो जगहों पर बड़ी खूबी के साथ चोरियाँ हो रही हैं। अगर चोर एक ही होता तो यह मुमकिन नहीं है।

उन चोरों को पकड़ लेना राजा ज्ञानशील ने अपना पहला कर्तव्य समझा और मंत्री से इस संबंध में सलाह मांगी।

मंत्री ने समझाया—"महाराज, हम इस बात का ढिंढोरा पिटवा देंगे कि जो चोरों को पकड़ कर हमारे हाथ सौंपेगा, उसे बहुत बड़ा पुरस्कार दिया जाएगा। गरीबों की मदद वक़्त पर चोर-डाकू किया करते हैं, इसलिए उन्हें चोरों का हुलिया मालूम हुआ होगा। गरीब लोगों में से कुछ लोग हमारे पुरस्कार के लोभ में पड़कर हमें चोरों को पकड़ा दे सकते हैं।"

राजा को मंत्री की यह सलाह समुचित न लगी। वे बोले—"मैं नहीं समझ पाता कि हम गरीबों को एक बार जो पुरस्कार देते हैं, उसे पाने के लोभ में पड़कर वे लगातार उन्हें मदद पहुँचानेवाले चोर-डाकुओं के प्रति दग़ा कर बैठेंगे। गरीबों में कृतज्ञता की भावना ज्यादा होती है। अलावा इसके जनता को धन का लोभ दिखाने का मतलब उन्हें घूसखोरी की आदत सिखाना ही माना जाएगा। साथ ही यह बात भी स्पष्ट हो जाएगी कि हम चोरों को पकड़ने में असमर्थ हैं। दर असल बात यह है कि गरीब लोग चोरों को पकड़वा नहीं देंगे, धनी लोग तो किसी भी हालत में उन्हें पकड़ नहीं सकते।

अगर ये लोग पकड़ पाते तो दिन दहाड़े खुले आम यों चोरियाँ न होतीं। मैंने जनता के हित के लिए कई काम किये हैं, इसलिए चोरों को पकड़ने का काम भी मुझे खुद अपने ही बल पर होना चाहिए।"

राजा ने सोचा–'चोर को चोर ही पकड़ सकता है।' यों विचार कर राजा छद्मवेष में रात के वक़्त राजधानी में चक्कर काटने लगे। उन्होंने चन्द दिनों में चोरों के बारे में कुछ जानकारी हासिल की। वह यह है, वास्तव में चोर एक नहीं, दो हैं। उनके नाम लखनसिंह और गजसिंह हैं। दोनों अच्छे परिवार में पैदा हुए हैं। उन परिवारों का पेशा चोरियाँ करना व डाके डालना कभी न रहा। मगर सारे देश में जब अराजकता फैल गई तब वे चोरियाँ करने पर तुल गये।

इसके बाद राजा ने अपने अंग रक्षकों की मदद से दोनों चोरों को पकड़ लिया। भरे दरबार में राजा ने उनकी सुनवाई की। दोनों ने मान लिया कि चोरियाँ की हैं। मगर गजसिंह ने अपनी कैफ़ियत यों दी: "महाराज, आप के गद्दी पर बैठने के पहले हमें चोरी करने की वृत्ति को छोड़ दूसरा कोई जरिया दिखाई न दिया। उन दिनों में मैंने जो चोरियाँ कीं, उनकी बाबत मैं पछताता नहीं हूँ; लेकिन आपके राज्यकाल में मैंने जो चोरियाँ की हैं, वे सब सिर्फ़ अपने स्वार्थ के वास्ते ही की हैं। क्यों कि चोरविद्या में मैंने जो

निपुणतर हासिल की, उसे त्यागने को मेरा मन मानता न था। मैंने चोरी करके जो धन इकट्ठा किया, उसके जरिये मैं आराम से अपने दिन काटता था। मगर यह लखनसिंह शुरू से ही गरीबों की मदद करता आ रहा है। इसने चोरी की संपत्ति का उपयोग कभी अपने सुख के वास्ते नहीं किया।"

इसके बाद राजा ने दोनों चोरों को आजीवन कारागार की सजा सुनाई।

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर पूछा—"राजन, राजा ज्ञानशील ने दोनों चोरों के बीच बहुत बड़ा फरक़ देखकर भी दोनों को एक ही प्रकार की सजा क्यों दी? इसका समाधान जानते हुए भी न देंगे तो आपका सिर फट जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों जवाब दिया—"राजा की दृष्टि में चोरों के उद्देश्य का कोई मूल्य नहीं है। धनवानों को लूटकर गरीबों में बांटने मात्र से देश संपन्न नहीं बन सकता। दलित व पीड़ित प्रजा की समस्या कालक्रम में राजकीय कार्यक्रमों के द्वारा ही हल होनी चाहिए, लेकिन चोरियों के द्वारा हल नहीं हो सकती। देश के उद्धार के प्रयत्न में ज्ञानशील जो कार्यक्रम अमल कर रहे थे, उनके द्वारा एक ओर अच्छे परिणाम निकल रहे थे, ऐसी हालत में गरीबी की समस्या को कृत्रिम मार्गों द्वारा हल करने का सपना देखनेवाले चोरों के कारण राजा के प्रयत्नों का कोई मूल्य नहीं रह गया। कम से कम गरीब जनता के अंदर यह भावना फैल गई होगी कि राजा से ये चोर ही कहीं अच्छे हैं, जनता के द्वारा ही राजा को यह बात मालूम हुई कि चोर ही जनता की मदद कर रहे हैं। इस बात को कोई भी राजा सहन नहीं कर सकते। इसलिए राजा के द्वारा दोनों चोरों को समान रूप से दण्ड देना समुचित है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

जीने की कला

माधव गुप्त का व्यापार जब टप्प हो गया तब उसे अपने बेटे की जीविका की चिंता सताने लगी। माधव का बेटा रघुनाथ व्यापार का बिलकुल अनुभव नहीं रखता था। एक बार माधव के गाँव का निवासी शंकर जो शहर में लाखों का व्यापार करता था, किसी काम से उस गाँव में आया, तब माधव ने अपने बेटे के भविष्य के बारे में चिंता प्रकट की। शंकर ने रघुनाथ को बुलाकर समझाया–"तुम अभी शहर जाकर मेरी पत्नी के हाथ यह चिट्ठी दे दो, मैं कल पहुँच जाऊँगा।"

रघुनाथ शहर में शंकर के घर पहुँचा। घर में शंकर की पत्नी और बहू थीं। शंकर की पत्नी ने रघुनाथ को खाना परोसते हुए अपनी बहू को वहाँ पर न देख कहा–"बेटा, मेरी बहू बड़ी ही झगडालू है। मुझे नाकों दम कर रखी है। कभी वह भी तो सास बन जाएगी न?"

"झरनेवाले पीले पत्तों को देख कोंपले मजाक़ उड़ाती हैं, मगर वे यह नहीं जानतीं कि उनका भी वही हाल होनेवाला है।" रघुनाथ ने जवाब दिया।

थोड़ी देर बाद सास की जगह बहू परोसने के लिए आई। उसने रघुनाथ से कहा–"मेरी सास बड़ी झगडालू है। कहती है कि तुम भी एक दिन सास बन जाओगी, तब ये सारी तक़लीफ़ें भोगोगी।"

"हम सब मरनेवाले हैं, यह सोचकर हम बचपन से ही कफ़न खरीदकर रख लेंगे?" सहानुभूति जताते रघुनाथ ने कहा।

शंकर ने शहर लौटकर यह जान लिया कि रघुनाथ ने शंकर की पत्नी और बहू को कैसा समझाया है, तब माधव के पास ख़बर भेज दी–"तुम्हारा बेटा चालाक है, व्यावहारिक ज्ञान रखता है, वह कचहरी में खूब चमकेगा।"

हक़

गंगापुरी नामक गाँव में जयराम नामक एक आदमी रहा करता था। वह शांत स्वभाव का था। बहुत कम बोलता, किसी से ज्यादा हिल मिलकर रहता न था। इसलिए लोग उसे बुद्धू समझते थे।

जयराम की पत्नी कमला बड़ी चालाक थी। वह बड़ी बातूनी और तुनक मिजाज की औरत थी। इसलिए गाँववाले उसके मुँह लगने से डरते थे। वह बड़ी कंजूस भी थी, यही वजह है कि उसने अपने पति की जायदाद का बंटवारा करने पर जोर दिया और गंगापुरी में लाकर अलग घर बसवाया। उसने घर के आवश्यक खर्च भी घटाकर रुपये बचाये, ब्याज पर देकर उस धन से गहने बनाये और उन पर इतराने लगी।

एक बार जयराम का छोटा भाई सियाराम अपने दोस्तों के साथ तीर्थाटन करने का संकल्प करके घर से चल पड़ा। चलते वक़्त उसने सोचा कि उसके पास जो रुपये हैं, घर पर छोड़कर जाना ठीक नहीं है, अतः वह गंगापुरी में रहनेवाले अपने भाई के हाथ देकर तीर्थाटन पर चला गया।

कमला ने अपने देवर के रुपयों की गिनती की, कुल छे सौ रुपये थे। रुपयों को देखते ही उसके मन में लालच पैदा हुई। उन्हें हड़पने का विचार कर आखिर एक निर्णय पर पहुँची।

जयराम एक दिन किसी काम पर शहर में जा रहा था। कमला मीठी आवाज़ में बोली–"अजी, सुनियेजी! मैं अपनी पाँच लड़ियोंवाली माला और कुछ रुपये भी दे देती हूँ। शहर में मेरी माला में छठी लड़ी जुड़वाकर सावधानी से ले आइये।"

शिव प्रसाद

जयराम ने माला के साथ रुपयों की थैली अपने हाथ लेते हुए भांप लिया कि ये रुपये सियाराम के हैं, हिम्मत करके धीरे से बोला–"ये रुपये हमारे नहीं हैं न?"

"आप की अक़्ल पर आग लगे। क्या सियाराम हमारे लिए पराये थोड़े ही है? क़्या उसके रुपये हमारे नहीं हैं? वह तो मेरे बेटे जैसा है। उसकी संपत्ति खाने का मुझे हक़ है। अगर कोई इस बात को नहीं मानता तो वह मेरे सामने आकर यह बात कह दे।" कमला ने गर्व से कहा।

"हाँ, तुम सच कहती हो, सियाराम हमारे बेटा जैसा है।" यों कहकर जयराम माला और रुपये लेकर जल्दी जल्दी शहर की ओर चल पड़ा।

जयराम के शहर पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई। वह थक गया था। इसलिए आराम करने के ख्याल से समीप की एक सराय में पहुँचा। वहाँ पर सियाराम को देख जयराम के आश्चर्य की कोई सीमा न रही।

सियाराम ने अपने बड़े भाई को समझाया–"भैया, उधर बाढ़ आ गई है। सब रास्ते पानी में डूब गये हैं। इसलिए हम लौट आये। मैं यहाँ से निकलकर गंगापुरी जाऊँगा और मेरे रुपये लेकर घर चला जाऊँगा।"

"अगर तुम सिर्फ़ रुपयों के वास्ते ही गंगापुरी में जाना चाहते हो तो तुम्हारे जाने की कोई जरूरत नहीं है। रुपये तो

मेरे ही पास हैं। लेकिन ये रुपये तुम्हारी भाभी ने लिये हैं। वह कह रही थी कि तुम उसके लिए बेटे के समान हो और इसलिए माँ के रूप में तुम्हारी संपति को भोगने का उसे हक़ है। इसलिए तुम उन रुपयों की आशा छोड़ दो।" जयराम ने समझाया।

सियाराम ने कई दिन तक मेहनत करके जो रुपये बचाये थे, उनके यों स्वाहा होते देख पीड़ा के मारे उसकी आँखों में आँसू आ गये।

अपने छोटे भाई की हालत पर जयराम को दया आ गई। वह जानता था कि कमला की बात को टालना खतरे से खाली नहीं है। पर साथ ही वह भी देखना है कि उसका छोटा भाई किसी हालत में दुखी न हो। लेकिन कैसे?

अचानक जयराम के दिमाग में कोई उपाय सूझा, वह बोला–"भैया, तुम चिंता न करो। तुम्हारी माता जैसी भाभी ने ही तुम्हारे रुपये ले लिये हैं, कोई पराये नहीं। उसके बेटे के रूप में यह माला भी तुम्हें लेने का हक़ है। इसलिए तुम यह गहना ले लो।" यों कहकर जयराम ने वह माला अपने छोटे भाई के हाथ दे दी और वह दूसरे ही दिन गंगापुरी को लौट आया।

जयराम की करनी पर कमला का दिल बैठ गया, वह चीखते-चिल्लाते शाप देने लगी–"अरे मेरा तो दो हजारों रुपयोंवाला गहना चला गया। इस बुद्धू की अक्ल पर आग लग जाये।"

पर जयराम की समझ में न आया कि कमला यों क्यों कर चिल्ला रही है और इसमें उसकी भूल ही क्या है। वह चकित हो खड़ा देखता रह गया।

थोड़ी देर बाद सियाराम आ पहुँचा, कमला के हाथ उसकी माला सौंप दी, तब जाकर उसकी जान में जान आ गई।

इसके बाद सियाराम रुपयों की थैली लेकर अपने भाई और भाभी से विदा लेकर अपने गांव की ओर चल पड़ा।

अक्लमंद नौकर

गोपी नामक लड़का शरभ नामक व्यापारी की दूकान में नौकर नियुक्त हुआ। वह सारे काम बड़ी जल्दी और अक़्लमंदी के साथ किया करता था। एक दिन सवेरे शरभ दूकान में पहुँचा, अपना कुर्ता निकालकर खूंटे पर लटकानेवाला था, तभी उसकी जेब से कुछ सिक्के नीचे गिर गये। गोपी ने उन्हें चुनकर शरभ के हाथ दे दिये।

उस दिन रात को शरभ खाना खाकर हाथ-मुंह धोकर अपने कमरे में पहुँचा। शरभ की पत्नी थाली उठाने पहुँची, तभी गोपी ने थाली में हाथ रखकर अंगूठी निकाली और शरभ के हाथ देने उसके कमरे में पहुँचा। शरभ ने उसी दिन गोपी को काम से निकाल दिया, इस पर उसकी पत्नी ने इसका कारण पूछा।

शरभ ने कहा-"आज सवेरे मेरी जेब से कुछ सिक्के नीचे गिर गये तो गोपी ने सोचा कि मुझे गिरे हुए सिक्कों का हिसाब मालूम नहीं है, उसने एक रुपये का सिक्का एक ओर सरका कर बाकी सिक्के चुनकर मेरे हाथ दिये। खाना खाते समय मेरी उंगली की अंगूठी थाली में गिर गई, तब उसने भांप लिया कि मेरी उंगली में अंगूठी नहीं है, मुझ पर हमेशा ऐसी निगरानी रखनेवाला नौकर मेरे लिए नहीं चाहिए।"

सच्चे भोक्ता

विद्यापुर के गाँव का मुखिया विरूपाक्ष एक संपन्न परिवार का था। वह रोज गरीबों में दान बांटा करता था। जो भी भूखा आदमी उसके घर पहुँचता, उसे खाना खिलाया करता था। वह हर साल वैशाख महीने में तीसों दिन साधु-सन्यासियों तथा गरीबों को भी खाना खिलाया करता था। इसलिए वैशाख में आसपास के गाँवों से ही नहीं, बल्कि दूर के प्रदेशों से भी साधू-सन्यासी विद्यापुर पहुँच जाते और विरूपाक्ष के द्वारा दिये जानेवाले मिष्टान्न भोजन बड़े आनंद के साथ खाया करते थे।

एक वर्ष विरूपाक्ष वैशाख महीने के अन्नदान का इंतजाम कर रहा था, तभी उसकी पत्नी विमलाक्षी ने आकर कहा– "अजी, इस साल सारे भोक्ता साधू और सन्यासी रहें तो बड़ा अच्छा होगा, देवता स्वरूप साधू और सन्यासियों में दान दे तो हमें पुण्य प्राप्त होगा। हमारे देश में आधी आबादी से ज्यादा लोग गरीब हैं, उन्हें खिलाने से हमें कौन-सा पुण्य मिलनेवाला है?"

"विमलाक्षी, क्या केवल गेरुए वस्त्र पहनने मात्र से सब कोई देवता स्वरूप बन जाते हैं? जो गेरुए वस्त्र नहीं पहनते, वे गरीब लोग क्या हमारे अन्न के भोक्ता बनने के नाक़ाबिल हैं? कल मैं अन्नदान का कार्यक्रम शुरू करने जा रहा हूँ। तुम मेरे कहे मुताबिक़ करो! मेरी बातों की सचाई तुम्हें अपने आप मालूम हो जाएगी!" इन शब्दों के साथ विरूपाक्ष ने अपनी पत्नी को अपनी पूर्व योजना बताई!

विमलाक्षी ने उस योजना को अमल करने का निर्णय किया।

प्रमीला ठाकुर

पहला दिन जब अन्नदान का कार्यक्रम शुरू हुआ, तब दस साधू इस तरह उस पंडाल के अन्दर आये, मानो उनके लिए कोई विशेष इंतजाम किया गया है, बोले—"सब से पहले हमारे साधुओं के दल को खाना परोसिये।" यों कहकर वे लोग मिष्टान्नों का इंतज़ार करने लगे।

इतने में विमलाक्षी अपने पति विरूपाक्ष की मदद लेकर दस ढक्कनों में मांड भरकर ले आई और साधुओं के आगे रखते हुए बोली—"महानुभावो, इस साल वक़्त पर पानी नहीं बरसा, इसलिए हम हर साल की तरह मिष्टान्न खिला नहीं पाते हैं! इस मांड को ही आप लोग मिष्टान्न मानकर सेवन कीजिए!"

ये शब्द सुनने की देर थी, सभी साधू क्रोध में आ गये और गरजकर बोले—"क्या हम लोग जो पंद्रह-बीस कोस की दूरी पैदल माप कर इसी मांड को पीने के लिए आये हैं? अगर तुम लोगों से दावत देना नहीं बनता, तो यह स्वांग ही क्यों रचा है?" यों कहकर मांड से भरे ढक्कनों पर लात मारकर अपने रास्ते चले गये।

विमलाक्षी ने कभी नहीं सोचा था कि बड़े साधू-महात्मा बने हुए ये लोग मिष्टान्न के न मिलने पर यों आग-बबूले हो उठेंगे, वह चकित हो देखती रह गई

इसके थोड़ी देर बाद साधुओं का एक और दल आ पहुँचा। वे लोग अपनी दाढ़ियों पर हाथ फेरते मिष्टान्नोंवाली

दावत की कल्पना करते हुए क़तार में आ बैठे। इस बार भी विमलाक्षी ढक्कनों में मांड भरकर ले आई और बड़ी श्रद्धा के साथ साधुओं के सामने रखते हुए वे ही बातें दुहराईं जो साधुओं के पहले दल को बताई थीं।

साधुओं का यह दल भी क्रोध में आ गया और बोला–"भिखारियों को खिलानेवाला यह मांड हम जैसे त्यागी महात्माओं को खिलाने के लिए तुम्हारे हाथ कैसे उठे? हम लोग दुर्भाग्य से यों साधू बन बैठे हैं, मगर एक जमाने में हम भी तुम लोगों से ज्यादा संपन्न थे।" यों चिल्लाकर ढक्कनों पर लात मारकर सभी सन्यासी वहाँ से चले गये।

इस साल वैशाख के महीने में कसकर मिष्टान्न खाने के लोभ में आये हुए मुनि, साधू, सन्यासी तथा ब्राह्मणों को मालूम हो गया कि उन्हें सिर्फ़ मांड ही मिल जाएगा। इस पर वे विरूपाक्ष तथा विमलाक्षी को गाली सुनाते वहाँ से चले गये। अब सिर्फ़ लूले, लंगड़े और कंगाल ही बच रहे!

विमलाक्षी ने उन्हें समझाया–"इस साल हम लोग तुम्हें मिष्टान्न नहीं खिला पा रहे हैं, हमारे घर में सिर्फ़ मांड ही मांड है। वह भी एक एक आदमी को सिर्फ़ एक ढक्कन भर ही मिलेगा।"

ये शब्द सुनने पर उन गरीबों के चेहरे खिल उठे, वे बोले–"माई, वही मांड हमें खिलाओ। हम लोग रोज मिष्टान्न थोड़े ही खाते हैं? मांड पीकर भी हमें कई दिन हो गये।" यों कहकर वे लोग घर के बाहर गली में क़तार बांधकर बैठ गये। बड़े ही संतोष के साथ मांड पीकर विमलाक्षी को आशीर्वाद देते हुए बोले–"माई अन्नपूर्णा! तुम चिरकाल तक जिंदा रहो, खुश रहो!"

तब जाकर विमलाक्षी ने जान लिया कि भूखा आदमी ही सच्चा भोक्ता होता है! ऐसे ही लोगों को खाना खिलाने पर पुण्य और पुरुषार्थ प्राप्त होते हैं!

घूसखोर

ब्रह्मदत्त काशी राज्य पर जिन दिनों में शासन करते थे, उन दिनों में बोधिसत्व उनके यहाँ क्रयाधिकारी के पद पर नियुक्त थे। क्रयाधिकारी का मतलब राज्य के लिए आवश्यक चीज़ें, वाहन इत्यादि की क़ीमत लगाना और उन वस्तुओं की उत्तमता का मूल्यांकन करनेवाला है।

बोधिसत्व काशी राज्य के लिए आवश्यक हाथी, घोड़े, सोना, चांदी वगैरह की जांच करके उनकी क़ीमत आंकते और अपने अंदाज के मुताबिक़ उनके मालिकों को धन चुका देते थे।

राजा ब्रह्मदत्त अव्वल दर्जे के कंजूस थे। इस कारण अपने क्रयाधिकारी बोधिसत्व के बारे में उनके मन में थोड़ी शंका पैदा हो गई। वे सोचने लगे कि कुछ लोग शिकायत करते हैं कि क्रयाधिकारी के जरिये खरीदी जानेवाली हर चीज़ की क़ीमत वे ज़्यादा चुकाते हैं, अगर यह सच है तो मेरे राज्य का जल्द ही दीवाला निकल जाएगा।

राजा ने यों सोचते हुए एक दिन अपने उद्यान की तरफ़ की खिड़की के किवाड़ खोल दिये। वहाँ पर धूप में बड़ी मेहनत के साथ पौधों को पानी सींचनेवाले एक माली पर उनकी नज़र पड़ी। तुरंत उनके मन में यह विचार आया—"ओह, यह माली कैसा ईमानदार है! वरना यह इस कड़ी धूप में क्यों कर जी तोड़ मेहनत करता।"

दूसरे ही दिन राजा ने माली को बोधिसत्व की जगह क्रयाधिकारी के पद पर नियुक्त किया। राजा का यह विश्वास था कि यह नया क्रयाधिकारी अपनी अक़्लमंदी से युक्ति पूर्वक चीज़ें ख़रीदकर उन्हें लाभ पहुँचायेगा। मगर वह नया क्रयाधिकारी लालची निकला। उसे वस्तु

के गुण, मूल्य और श्रेष्ठता को परखने का ज्ञान न था। इसलिए अगर हाथी, घोड़े या दूसरी चीज़ों का भी सौदा करना होता तो वह अपने मन में जो आता वही दाम निश्चय करता, लेकिन उन चीज़ों के लिए कोई एक सही निर्णय या अंदाज न होता। इस कारण जो व्यापारी अपनी चीज़ें बेचने के लिए ले आते, उन्हें अकसर नुक़सान उठाना पड़ता था।

उन सौदागरों की चीजें खरीदनेवाला व्यक्ति राजा का क्रयाधिकारी था, इस वजह से उन्हें नुक़सान होने पर भी राज्य की ओर से जो दाम मिलता, उसे लेकर वे चुपचाप अपने घर लौट जाते थे। मगर वे यह कहने से डरते थे कि सौदेबाजी में उनके प्रति अन्याय हो गया है और उन्हें खूब नुक़सान उठाना पड़ा है।

एक दिन उत्तर देश से एक घोड़ों का सौदागर पाँच सौ अच्छे क़िस्म के घोड़े लेकर राजा के पास पहुँचे। तुरंत राजा ने अपने दरबारी क्रयाधिकारी को बुला भेजा और उन घोड़ों को परखकर उनका मूल्य निर्द्धारित करने को कहा।

क्रयाधिकारी ने प्रवेश करके पाँच सौ घोड़ों की जांच की और यह आदेश दे दिया—"बहुत कुछ सोच-विचारने पर भी इनका मूल्य एक पंसेरी चावल से ज्यादा मालूम नहीं होता। इसलिए इन घोड़ों के मालिक को एक पंसेरी चावल देकर इन्हें घुड़साल में बांध दो।"

घोड़ों के सौदागर का दिल बैठ गया। पर वह अपने घर नहीं लौटा, सीधे राजा के पुराने क्रयाधिकारी बोधिसत्व के पास पहुँचा और अपने प्रति जो अन्याय हुआ था, उसकी शिकायत की।

बोधिसत्व ने सौदागर के मुँह से सारी बातें सुनकर कहा—"महाशय, आप एक काम कीजिए! आप इस नये क्रयाधिकारी को खुश करने के लिए पहले उन्हें घूस दे दीजिए, तब उनसे पूछ लीजिए—'महाशय, आप ने मेरे घोड़ों की क़ीमत एक पंसेरी

चावल बताई, यह क़ीमत तो न्याय संगत है! लेकिन क्या आप राजदरबार में इस पंसेरी चावल की क़ीमत कितनी होगी, यह राजा के सामने बता सकते हैं?' अगर वे इस बात को मान ले तो उन्हें आप कल राजा के सामने ले जाइये। उस वक़्त मैं भी हाज़िर हो जाऊँगा, मैं देखूँगा कि आप के प्रति न्याय हो।"

बोधिसत्व के कहे मुताबिक घोड़ों का सौदागर उसी वक़्त क्रयाधिकारी के घर पहुँचा। उसे थोड़ा धन घूस दे दिया। बोधिसत्व के कहे अनुसार पूछा।

क्रयाधिकारी ख़ुश होकर बोला—"इस पंसेरी चावल की क़ीमत बताना मुश्किल की बात थोड़े ही है? मैं कल दरबार में राजा के सामने यह बात बताकर उनसे 'हाँ' कहलवा दूँगा।"

दूसरे दिन राजदरबार खचाखच भरा हुआ था। समय पर मंत्री तथा राज्य के प्रमुख अधिकारी भी हाज़िर हुए। राजा की अनुमति पाकर बोधिसत्व भी दरबार में पहुँचे।

नुक़सान उठानेवाले घोड़ों के सौदागर ने राजा से पूछा—"महाराज, आप के नये क्रयाधिकारी ने मेरे पाँच सौ घोड़ों का मूल्य एक पंसेरी चावल निर्द्धारित किया। यह बात तो अच्छी है! मगर इसमें मेरा एक संदेह है, कृपया बता दीजिए कि उस पंसेरी चावल का क्या दाम है?"
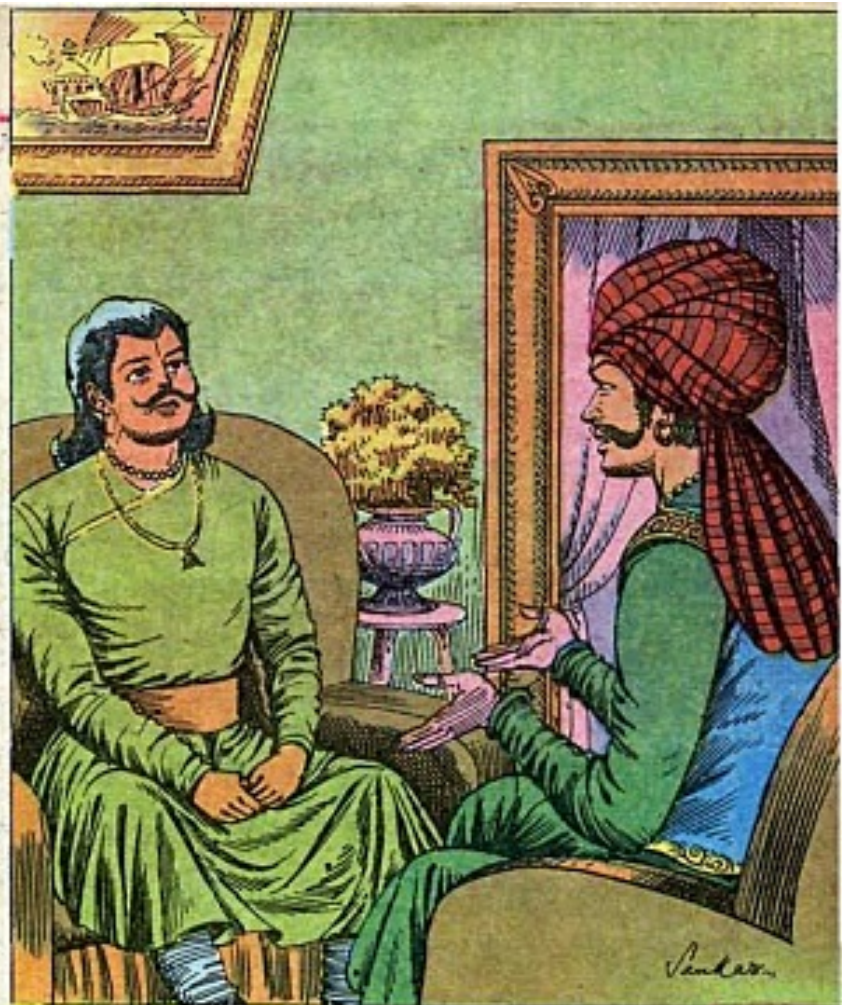
उस क्षण तक राजा को इस संबंध में कोई ख़बर न थी। इसलिए वे आश्चर्य में आ गये। उन्होंने नये क्रयाधिकारी से पूछा—"सुनो, तुमने पाँच सौ घोड़ों का दाम कितना लगाया?"

"महाराज! एक पंसेरी चावल!" क्रयाधिकारी ने बिना किसी प्रकार की झिझक के झट जवाब दिया।

"अच्छा! ऐसी बात है! तब तो अगर पाँच सौ घोड़ों का दाम एक पंसेरी चावल है, तो उस पंसेरी चावल का दाम क्या होगा?" राजा ने पूछा।

दरबारी क्रयाधिकारी ने बिना संकोच के कह दिया—"महाराज, एक पंसेरी चावल का दाम कोई ज़्यादा नहीं है। काशी राज्य तथा अड़ोस-पड़ोस के सामंत राज्यों को मिलाने पर उनकी जो क़ीमत होगी, वही क़ीमत इस पंसेरी चावल की होगी! बस, यही बात।"

यह अनोखा जवाब सुनकर मंत्री, राज्य के अधिकारी तथा नगर के प्रमुख व्यक्तियों ने नये क्रयाधिकारी का मजाक़ उड़ाते तालियाँ बजाईं और हँसते लोट-पोट हो गये।

इसके बाद दरबार के एक प्रमुख व्यक्ति ने उठकर नये क्रयाधिकारी से पूछा—"हम लोग आज तक यह सोचते आ रहे थे कि इन राज्यों की क़ीमत लगाना नामुमक़िन है, लेकिन हमने आज ही यह बात तुमसे जान ली कि सारे काशी राज्य की क़ीमत सिर्फ़ एक पंसेरी चावल के बराबर है। वाह, तुम्हारी बुद्धिमत्ता अद्भुत है! अपूर्व है!" इन शब्दों के साथ उस सज्जन ने नये क्रयाधिकारी की अवहेलना की।

उस वक़्त बोधिसत्व ने आगे बढ़कर कहा—"इस क्रयाधिकारी का कहना बिलकुल सत्य है! इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। उस पर आप लोग हँसियेगा नहीं, उसका मजाक़ भी न उड़ाइयेगा। उसने पाँच सौ घोड़ों का दाम एक पंसेरी चावल बताया। एक पंसेरी चावल का मूल्य काशी राज्य तथा सामंत राज्यों के मूल्य के बराबर बताया। इससे यह साबित होता है कि उन पाँच सौ घोड़ों का मूल्य काशी राज्य तथा उसके सामंत राज्यों के मूल्य के बराबर है। इस कारण क्रयाधिकारी के द्वारा घोड़ों का जो मूल्य निर्द्धारित किया गया है, वह बिलकुल न्याय संगत प्रतीत होता है।"

बोधिसत्व की बातें सुन सब लोग आश्चर्य में आ गये। सुनवाई करने पर राजा को सारी बातें मालूम हो गईं। तब राजा ने अपनी भूल समझ ली और उस घूसख़ोर को क्रयाधिकारी के पद से हटाकर फिर बोधिसत्व को उस पद पर नियुक्त किया।

बुद्ध का निर्वाण

बुद्ध के यहाँ सारिपुत्र और मौद्‌गल्यायन नामक दो योग्य और समर्थ शिष्य थे। बुद्ध ने उन दोनों को बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए नियत किया। दोनों ने अलग-अलग प्रांतों में अपने निवास बनाये।

कुछ साल बाद सारिपुत्र ने जान लिया कि उनके निर्वाण का समय निकट आया है। उन्होंने बुद्ध के दर्शन किये। बुद्ध के द्वारा आशीर्वाद भी प्राप्त किया, तब अपनी माता के पास जाकर उन्हें बौद्ध धर्म में शामिल कराया, आख़िर एक दिन सूर्योदय के वक्त निर्वाण प्राप्त किया।

मौद्‌गल्यायन के बौद्ध धर्म संबंधी उपदेश कुछ अन्य मतावलंबियों के क्रोध के कारण बने। उन लोगों ने मौद्‌गल्यायन को मार डालने के लिए एक दुष्ट व्यक्ति को भेजा। लेकिन ज्यों ही वह उनकी कुटी में पहुँचा, त्यों ही मौद्‌गल्यायन अद्‌भुत रूप से हवा में उड़ते उससे दूर चले गये।

इस तरह कई बार करके मौद्गल्यायन ने उन दुष्टों से अपनी आत्मरक्षा की। लेकिन एक बार जब एक हत्यारा लाठी लिये ज्यों ही उसकी कुटी में पहुँचा, त्यों ही उन्हें अपने पूर्व जन्म संबंधी एक घटना याद हो आई।

पूर्व जन्म में उन्होंने अपने वृद्ध माता-पिताओं का पिंड छुड़ाना चाहा, इस वास्ते वे उन्हें एक जंगल में ले गये, नकली दाढ़ी-मूँछें लगाकर उन्हें मारने पहुँचे। तब उनके माता-पिता जोर से चिल्ला उठे–"बेटा, तुम यहाँ से भागकर अपनी जान बचा लो।" इस प्रकार उनके माता-पिता ने उनकी रक्षा के वास्ते जो चेतावनी दी, उसके द्वारा उनका हृदय-परिवर्तन हो गया।

इसके बाद वे अपने माता-पिता को घर वापस ले गये। अपने पूर्व जन्म के इस पाप कृत्य की याद आते ही मौद्गल्यायन की अद्भुत शक्ति नष्ट हो गई। हत्यारे ने उन पर लाठी चलाई और वह यह सोचकर चला गया कि मौद्गल्यायन मर गये हैं। मगर वे अंतिम सांस गिनते बुद्ध के पास पहुँचे और उनके चरणों के सामने अपने प्राण त्याग दिये।

जब बुद्ध की उम्र अस्सी साल की थी, तब वे एक दिन वैशाली नगर में गये। अत्यंत रूपवती राज नर्तकी अंबापाली उनके दर्शन करने आई। उसने बुद्ध तथा उनके शिष्यों के वास्ते अपने उद्यान में ठहरने का प्रबंध किया और भोजन करने के लिए अपने घर निमंत्रित किया। बुद्ध ने उसकी प्रार्थना को मान लिया।
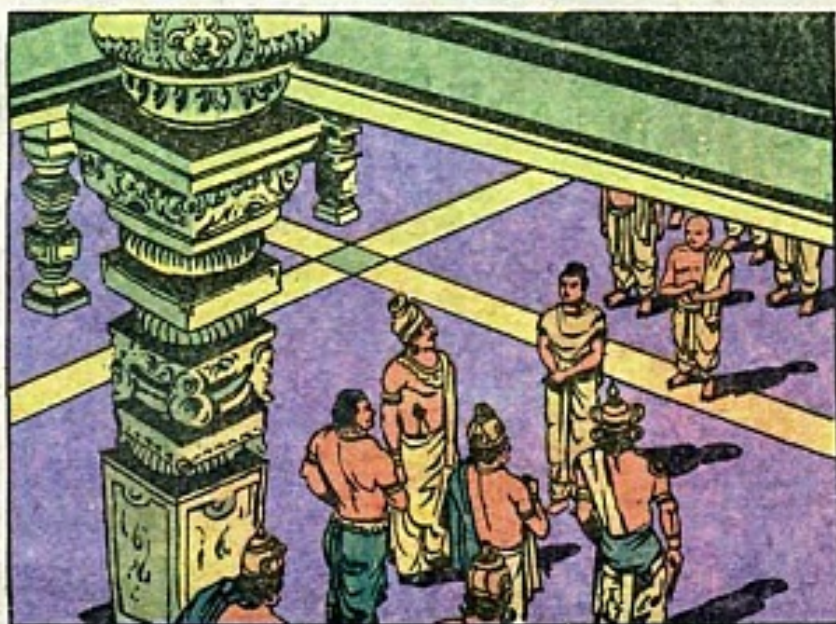
थोड़ी देर बाद कुछ कुलीन व्यक्तियों ने बुद्ध को भोजन के लिए न्योता दिया। साथ ही एक राज नर्तकी के घर भोजन करने की स्वीकृति देने की निंदा की। बुद्ध ने उन्हें समझाया–"गंगा और कृष्णा नदियाँ भले ही अलग क्यों न हों, लेकिन समुद्र में मिलने पर वे अपनी भिन्नता को खो बैठती हैं। इसी प्रकार मेरे उपदेश सुननेवाली नर्तकियाँ और कुलीन व्यक्ति भी समान हैं।"

बुद्ध ने एक दिन अपने शिष्यों को बुलाकर बताया कि वे तीन महीनों में निर्वाण को प्राप्त होनेवाले हैं। इस पर उनके सारे शिष्य दुखी हो उठे। बुद्ध ने उन्हें सांत्वना देकर समझाया–"महान से महान व्यक्तियों के लिए भी मृत्यु अनिवार्य है। भविष्य में मेरे उपदेश ही आप लोगों के मार्गदर्शक हैं।"

बुद्ध वैशाली से पावा नगर पहुँचे। वहाँ पर उनके एक कुम्हार शिष्य चुंड ने उन्हें आतिथ्य दिया। उसने बड़ी भक्ति के साथ मांसहारवाला भोजन खिलाया। बुद्ध जानते थे कि मांसाहार उनकी हानि करेगा, फिर भी शिष्य के प्रति अत्यंत प्रेम के कारण वे मना न कर पाये।

भोजन के बाद बुद्ध बीमार पड़े। उन्होंने अपने शिष्यों को बताया कि उनका निर्वाण निकट आया है, उनके अंतिम दर्शन के लिए लोगों की भीड़ लग गई। उस बीमारी की हालत में भी बुद्ध ने अपने शिष्यों के प्रश्नों तथा संदेहों का जवाब दिया। इसके बाद उन्होंने शांति के साथ सदा के लिए आँखें मूंद लीं।

बुद्ध के धार्मिक उपदेश चारों तरफ़ फैल गये। उनके नाम पर स्थूप और भिक्षुओं के लिए विहार भी भारत देश में ही नहीं, बल्कि दूसरे देशों में भी स्थापित हुए। उनके धार्मिक उपदेशों पर असंख्य काव्य, नाटक और आलोचनात्मक ग्रंथ प्रकाशित हुए। यही नहीं, बौद्ध धर्म विश्व के मुख्य धर्मों में से एक के रूप में शाश्वत हो गया।

उग्रसेन का क्रोध

महाराज उग्रसेन स्वभाव से बड़े ही क्रोधी हैं। जब तक वे युवराजा रहे, कोई मुसीबत न थी। मगर जब से वे राजा बने, तब से उनका क्रोध कई अनर्थों का कारण बना।

अपने क्रोध पर नियंत्रण रखने के लिए उग्रसेन ने अनेक प्रकार से प्रयत्न किये, फिर भी जब उन्हें क्रोध आ जाता, तब वे बड़ी निर्दयता पूर्ण व्यवहार करते थे। लेकिन क्रोध के उतर जाने पर उनके जैसे सज्जन का मिलना मुश्किल था।

एक बार राजा उग्रसेन एक सेवक पर नाराज़ हो गये। उन्होंने उसी वक़्त उसे पच्चीस कोड़े लगाने का कठिन दण्ड सुनाया और तत्काल उसे अमल कराया। वह जब मार खाकर बेहोश हो गया, तब राजा का क्रोध उतर गया। वे अपनी करनी पर बड़े दुखी हुए, सेवक का इलाज करवाया और रानी के पास जाकर अपनी करनी पर पश्चात्ताप प्रकट किया।

रानी ने समझाया–"महाराज, आप का स्वभाव देश के लिए खतरनाक है।"

इस पर राजा ने कहा–"मैं क्या करूँ? अपने क्रोध पर क़ाबू नहीं कर पाता हूँ।"

"महाराज, मैं आप को एक उपाय बताऊँगी। इस बार जब आप को क्रोध आएगा, तब आप जो दण्ड दूसरों को देते हैं, उसे आप भोगिये।" रानी ने सुझाया।

एक हफ़्ते के अन्दर राजा उग्रसेन ने क्रोधावेश में आकर एक दूसरे सेवक को पच्चीस कोड़े लगाने का कठिन दण्ड सुनाया। दण्ड के अमल करने के बाद उनका क्रोध उतर गया। उस वक़्त राजा को रानी की बातें याद आ गईं। उन्होंने कहा–"इस छोटी-सी गलती के लिए पच्चीस कोड़े लगाने की सजा देना

"वसुंधरा"

"मुझ पर कोड़े न लगाये, इस अपराध पर मैं अपने सेवकों को कैसे दण्ड दे सकता हूँ? अगर तुम से बनता है तो तुम्हीं इस दण्ड को अमल करो।" राजा ने कहा।

रानी ने एक सेवक को बुलाकर पूछा– "तुम मेरे आदेश का पालन करोगे या इस वक़्त मरने को तैयार हो जाओगे?"

सेवक जान के डर से कांप उठा और रानी के आदेश का पालन करने को मान लिया। इसके बाद रानी ने उसके हाथ कोड़ा देकर राजा को मारने को कहा, सेवक इसके लिए तैयार हो गया।

कोड़े की पहली मार खाते ही राजा की देह पीड़ा से कांप उठी। दूसरी मार के पड़ने के पहले ही राजा ने सेवक के हाथ से कोड़ा छीन लिया और उस पर दस कोड़े लगाये। रानी कुछ कहने को हुई, पर राजा अनसुनी करके सीधे मंत्री के पास गये और बोले–"मंत्री महोदय, रानी ने राजद्रोह का संकल्प किया है। मैंने उसे देश निकाले की सजा सुनाई है। यदि तुम तत्काल उसे अमल न करोगे तो तुम भी राजद्रोही माने जाओगे।"

लाचार होकर मंत्री रानी को समीप के एक जंगल में छोड़ आये। इसके बाद राजा का क्रोध उतर जाने पर वे पछताये

अपराध है। मैं अपने इस अपराध के लिए यही दण्ड भोगूंगा।"

लेकिन वहाँ के सेवकों में से कोई भी राजा के बदन पर कोड़े लगाने आगे न आया। राजा ने रानी के पास जाकर यह समाचार सुनाया। रानी ने हँसकर कहा– "सेवक की छोटी-सी गलती पर आप ने उसे पच्चीस कोड़े लगवाये। राजा के आदेश का पालन न करना बड़ा अपराध है न? फिर भी ऐसे अपराध करनेवाले सेवकों पर आप को क्रोध न आया। इसका मतलब है कि आप दण्ड भोगने की इच्छा नहीं रखते।"

यह जवाब सुनने पर राजा उग्रसेन के अंह को धक्का लगा।

और रानी को फिर अपने अंत:पुर में लिवा लाये, उनसे क्षमा भी मांग ली।

रानी ने एक और सुझाव दिया–"अगर महाराजा मुझे क्षमा करे तो मैं एक और उपाय बताती हूँ। आप क्रोधावेश में आकर जो दण्ड सुनाते हैं, उसे तत्काल अमल करने से रोक दीजिए। इस बीच आप का क्रोध उतर जाएगा। क्रोध के शांत हो जाने पर आप से बढ़कर उत्तम पुरुष और कोई नहीं हो सकते हैं न?"

राजा ने अपने कर्मचारियों को ऐसा ही आदेश दिया। लेकिन यह उपाय भी सफल न हुआ। राजा जो दण्ड सुनाते थे, उसे उसी वक़्त अमल न करने पर उन लोगों पर नाराज़ हो जाते थे। यही नहीं, उस दण्ड के अमल होने तक राजा का क्रोध बढ़ता ही जाता था।

एक बार राजा स्वयं अपने क्रोध के संबंध में प्रजा की राय जानने के लिए छद्म वेष में सारा देश घूम आये।

एक जगह पर राजा की मुलाक़ात उनसे ज्यादा क्रोधी स्वभाव के व्यक्ति से हुई। उसने जान-बूझकर राजा से झगड़ा मोल लिया और बड़ा हंगामा मचाया।

वहाँ पर इकट्ठे हुए लोग उग्रसेन से बोले–"महाशय, आप शांत हो जाइये, अगर यह नाराज़ हो जाता है तो महाराजा की भी परवाह नहीं करता है।"

"क्यों नहीं परवाह करता? मैं ही महाराजा हूँ। अगर यह इस वक़्त मेरे

पैरों पर गिरकर माफ़ी मांग नहीं लेता तो इसे मैं पचास कोड़े लगवा दूंगा।" राजा ने अपना वेष हटाते हुए कहा।

यह मालूम होने के बाद भी वह आदमी अपने क्रोध पर क़ाबू किये बिना बोल उठा—"महाराजा हुए तो क्या हुआ? गलती तो उनकी ही है। उन्हें ही मेरे पैर पकड़कर माफी मांग लेनी है।"

इस पर राजा उग्रसेन का क्रोध भड़क उठा। इस कारण क्रोधी स्वभाव के व्यक्ति को कोड़ों की मार की सजा भोगनी पड़ी। वह मार खाते हुए भी राजा को गाली सुना रहा था। ऐसे मूर्ख को इस तरह की कठोर सजा सुनाने पर कई लोग मन ही मन राजा की निंदा कर रहे थे।

क्रोध शांत होने पर राजा ने महारानी को यह समाचार सुनाते हुए कहा—"महारानी, मेरी प्रजा में मुझ से भी बढ़कर क्रोधी स्वभाव के लोग हैं! जो लोग मार खाते हुए भी अपने गुस्से पर क़ाबू नहीं कर सकते, ऐसे लोगों को देखते हुए मुझे अपने क्रोध के लिए दुखी होने की कोई ज़रूरत नहीं है।"

पर राजा की इस बात को रानी ने न माना। वे बोलीं—"साधारण व्यक्ति का क्रोध सिर्फ़ उसे ही हानि पहुँचा देता है। मगर ऐसे क्रोध रखनेवाले आप को राजा बनने की अर्हता नहीं है। अगर आप राज्य का तथा जनता का हित चाहनेवाले हैं तो राज्य शासन का भार मुझ पर छोड़कर आप एक साधारण नागरिक के रूप में रह जाइये।"

राजा न मालूम किस मानसिक स्थिति में थे, उन्होंने रानी की बात मान ली। रानी के हाथ में अधिकार देने के थोड़े दिन बाद राजा का क्रोध बहुत हद तक शांत हो गया। शीघ्र ही राजा समझ गये कि अधिकार हाथ में न रहने पर किसी का भी क्रोध क़ाबू में रह जाता है; क्योंकि इसके पूर्व उनके क्रोध को बढ़ानेवाली चीज़ उन्हें दण्ड देने का अधिकार ही है।

उपकार का बदला

आनंदा बाई के चार बेटे थे । उसकी बहन के मरने पर उसके लड़के जीवन को अपने घर ले आई और पाला-पोसा । कुछ साल बाद सभी युक्त वयस्क हुए । जीवन अपने गांव को लौटकर अपनी जमीन में खेतीबाड़ी करते जीवन-यापन करने लगा ।

आनंदा बाई के चारों बेटों ने शादियाँ कीं, मगर किसी भी बहू ने उसे अपने घर में रहने नहीं दिया । थोड़े दिन तक बेटों ने मदद दी, कुछ दिन बाद बेटों ने मदद देना बंद किया । तब आनंदा बाई एक अमीर के घर चाकरी करते वहीं रहने लगी ।

एक बार जीवन अपनी काकी को देखने आया, जब उसे मालूम हुआ कि बेटों ने उसे आश्रय नहीं दिया, इसलिए वह किसी अमीर के घर चाकरी करते अपने दिन घसीटती है, जीवन बड़ा दुखी हुआ । इस पर वह सीधे अमीर के घर पहुँचकर बोला–"महाशय, मैं अपनी काकी को अपने घर ले जाना चाहता हूँ । मैं इनका पालन-पोषण करूँगा ।"

जीवन की उपकार बुद्धि पर प्रसन्न हो अमीर ने कहा–"पालतू माता के प्रति ऐसा भाव रखनेवाले कम होते हैं । मैं तुम्हारे इस व्यवहार पर बहुत खुश हूँ । मैं अपनी पुत्री का तुम्हारे साथ विवाह करना चाहता हूँ । तुम को कोई आपत्ति नहीं है न ?"

"जी हाँ, मुझे आपत्ति है ! मैं शादी कर लूँ तो मेरी काकी की फिर से यही हालत हो सकती है ।" जीवन ने जवाब दिया । इस पर अमीर ने कहा–"तुम्हें डरने की कोई जरूरत नहीं है । मेरे तो इकलौती बेटी है । तुम और तुम्हारी काकी दोनों हमारे घर में ही रह सकते हो ।" तब जाकर जीवन ने शादी करने को मान लिया ।

असली सोना

एक मकान में तीन हिस्से थे। एक में सोमशर्मा नामक एक पंडित थे, जो अपने घर पर पच्चीस लड़कों को पढ़ाते थे।

दूसरे हिस्से में विष्णुदत्त नामक एक भक्त रहा करते थे। उनके घर में रोज भजन, पुराण वगैरह कार्यक्रम चलते थे।

तीसरे हिस्से में कृष्णदास नामक एक गृहस्थ था, लेकिन उसकी पत्नी के शरीर में हर शनिवार को देवता प्रवेश करते, जो प्रश्न करनेवालों को उसके जरिये जवाब दिया करते थे। प्रश्न पूछनेवालों से कृष्णदास एक एक सवाल के लिए दो रुपये के हिसाब से वसूल किया करते थे। फिर भी शनिवार के दिन उसका घर लोगों से कचाकच भर जाया करता था।

उस मकान में पानी की कोई सुविधा न थी, इसलिए वीरभद्र नामक व्यक्ति तालाब से पानी लाकर तीनों हिस्सों के परिवारों को दे देता था। वीरभद्र के लिए अपना कहनेवाला कोई न था।

पार्वती नामक औरत तीनों हिस्सों के परिवारों के बर्तन मांझकर अपने बीमार पिता को पालती थी।

एक शनिवार की शाम को पार्वती बर्तन मांझकर कृष्णदास के रसोई घर में करीने से सजा रही थी। दिन भर प्रश्नकर्ताओं के सवालों के जवाब देकर कृष्णदास की पत्नी थकावट के मारे शिथिल हो चटाई पर लेटी हुई थी। कृष्णदास भक्तों के द्वारा समर्पित फल व नारियल टोकरी में भर रहा था। वह अंधेरा फैलते ही उन्हें बेच लेता था।

कृष्णदास के द्वारा फलों को टोकरी में भरते देख पार्वती को अपने बीमार पिता की याद हो आई। उसने पूछा—"मालिक, फल बहुत महँगे हैं, मैं खरीद नहीं सकती।

रामदयालु उपाध्याय

दो फल दे दीजिए, मैं अपने बीमार बाप को खिलाऊँगी ।"

कृष्णदास ने झट टोकरी को कपड़े से ढक दिया, तब गरजकर बोला-"तुम्हारी नज़र इन फलों पर पड़ गई? आज देखना है, ये फल किस भाव से बिकते हैं?"

थकी हुई कृष्णदास की पत्नी उठ बैठी, और खीझकर बोली-"तुम्हें तनख्वाह के अलावा फल भी चाहिए? लालच का भी कोई अंत होना चाहिए! जाओ ।"

पर पार्वती को कृष्णदास की पत्नी की वे बातें याद आईं, जो थोड़ी ही देर पहले उसने किसी भक्त के सवाल के जवाब में कह दी थीं-"तुमने लोभ में पड़कर यह अनर्थ मोल रखा है । लालच कोई अच्छी चीज़ नहीं, उसे त्यागनी चाहिए ।" फिर क्या था, पार्वती को हंसी आई!

उसी समय वीरभद्र सोमशास्त्री के हिस्से में था । वह एक गरीब विद्यार्थी को सोमशास्त्री के लड़के की पुरानी किताबें दिलाना चाहता था । सोमशास्त्री के मुँह से वीरभद्र ने इसके पूर्व ये बातें सुनी थीं-"समस्त दानों में विद्या का दान महान है ।"

इसी भरोसे से वीरभद्र ने कहा-"मालिक! आप के बच्चे के लिए जो किताबें काम की नहीं हैं, वे किताबें बेचारे उस गरीब विद्यार्थी को दे तो पढ़ लेगा ।"

"अबे, यह लालच नहीं तो और क्या है? गरीब को पढ़ाई से क्या मतलब है? मजूरी करके पहले अपना पेट भर ले । किताबें चाहता है तो कह दो कि उनके आधे दाम तो दे?" सोमशास्त्री ने कहा ।

वीरभद्र निराश हो बाहर चला आया, तभी कृष्णदास के हिस्से में से बाहर आनेवाली पार्वती से उसकी मुलाक़ात हो गई । दोनों ने आपस में एक-दूसरे की बात बताई ।

पार्वती बोली-"अरे, इन बातों को छोड़ दो, कल पड़ोसी गाँव में मेला लगता है । भगवान का उत्सव भी है । हम दोनों चलेंगे ।"
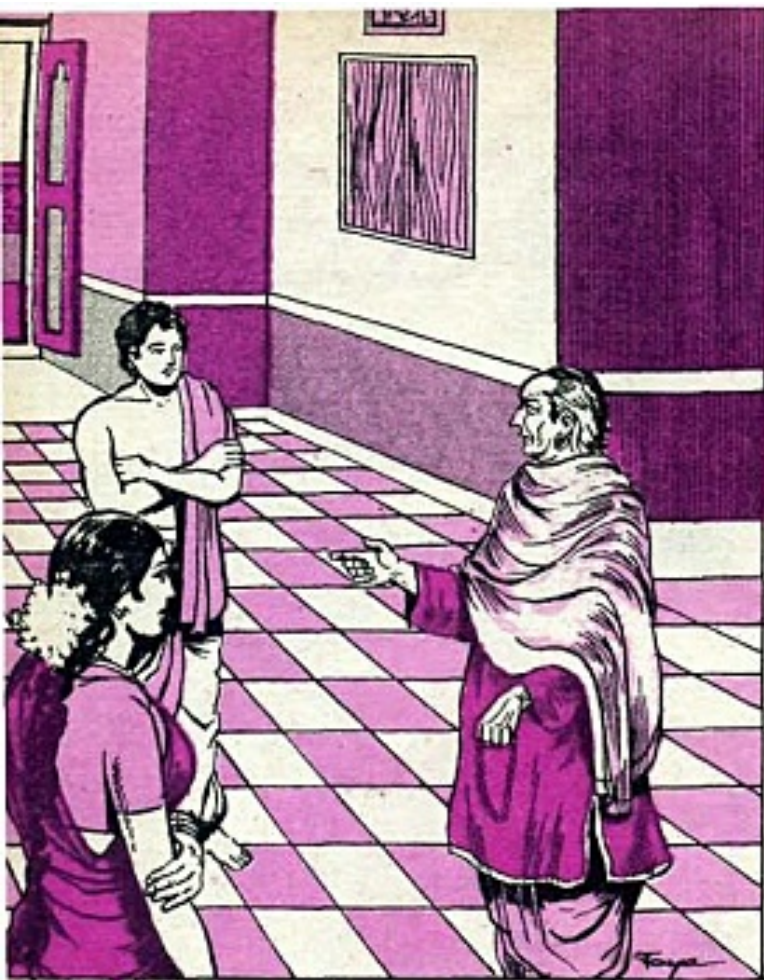
"यहाँ पर हमारा काम कौन करेगा?" वीरभद्र ने शंका प्रकट की ।

"मुँह अंधेरे आकर अपना काम पूरा करके चल देंगे । विष्णुदत्तजी तो बड़े ही भक्त हैं, पहले हम उनकी अनुमति लेंगे ।" पार्वती ने सुझाया ।

"हाँ, हाँ, मैंने भी उनके मुँह से सुना है, वे कहते थे कि एक दिन का चौथा हिस्सा भगवान की पूजा में बिताना चाहिए ।" वीरभद्र ने कहा ।

मगर हुआ यह कि विष्णुदत्त ने मेले में जाने की अनुमति नहीं दी, उल्टे डांट दिया—"तुम लोगों की आशा का कोई अंत नहीं है । काम-वाम किये बिना तनख्वाह चाहते हो? तुम लोग अगर एक जून भी काम से गैर हाज़िर हो जाओगे तो मैं तुम्हारी तनख्वाह काट दूंगा । भगवान को देखने और कहीं जाने की क्या ज़रूरत है? वे तो सब जगह हैं ।"

इसके बाद वे दोनों बाहर आये ।

"इन बड़े लोगों की कथनी और करनी में कहीं भी साम्य नहीं है ।" पार्वती गुस्से में आकर बोली ।

दूसरे दिन सवेरे धुँधली रोशनी में वीरभद्र पानी लिये जा रहा था, उसे उस मकान के आंगन में कोई चीज़ चमकती दिखाई दी । बहंगी उतार कर वीरभद्र ने उसे अपने हाथ में लिया । वह चीज़ और कोई न थी, सोने की एक अंगूठी थी ।

उसी समय पार्वती चौका बर्तन करने आ पहुँची, वीरभद्र ने पार्वती को अंगूठी दिखाकर कहा—"हाँ, मुझे मिल गई है ।"

कृष्णदास उसी वक़्त बाहर निकला । उसके कानों में यह बात पड़ गई—"हाँ, मुझे मिल गई है ।" वह वीरभद्र के निकट पहुँचा, अंगूठी को देख चिल्ला उठा—"अबे, यह अंगूठी तो मेरी है । किसी भक्त ने हमें भेंट में दी है । यह मेरी उंगली से फिसल गई होगी, मुझे दे दो ।"

उसके पीछे खड़ी कृष्णदास की पत्नी बोली—"हाँ, हाँ, श्रद्धापूर्वक किसी भक्त के

द्वारा दी गई अंगूठी कहाँ जाएगी? इसीलिए मिल गई है ।"

यह हलचल सुनकर सोमशर्मा भी असली बात जानकर वहाँ पर आ धमका और बोला—"यह अंगूठी तो मेरे किसी शिष्य ने मुझे गुरुदक्षिणा के रूप में दे दी है। मुझे दे दो, यह तो मेरी है ।"

"हाँ, भाइयो, मैं दिन भर उस अंगूठी को अपनी उंगली में पहने हुए थी, शायद फिसल कर नीचे गिर गई होगी ।" सोमशर्मा की पत्नी ने कहा ।

इस सारे दृश्य को देखनेवाले विष्णुदत्त ने आगे बढ़कर कहा—"पड़ोसी गाँव में जब मैंने रामायण पर प्रवचन दिया था, तब उस गाँववालों ने चंदा वसूल कर यह अंगूठी मुझे भेंट की थी। यह तो बिलकुल मेरी अंगूठी है। मेरे हाथ दे दो ।"

विष्णुदत्त की पत्नी ने कहा—"यह अंगूठी तो भगवान के नाम पर पड़ोसी गाँववालों ने दी थी। उसे तुम लोग छू भी लोगे तो तुम लोग अंधे हो जाओगे ।"

इस प्रकार सबने उस अंगूठी पर अपना अधिकार जताया, पर वीरभद्र की समझ में न आया कि वास्तव में वह अंगूठी किसकी है? किसके हाथ उसे सौंप दे?

इसी वक्त पार्वती ने झट वीरभद्र के हाथ से वह अंगूठी छीन ली और बोली—"यह अंगूठी कल रात को वीरभद्र को ताड़ीखाने में मिली थी। आप लोग बताइये कि कल जो आदमी उस ताड़ीखाने
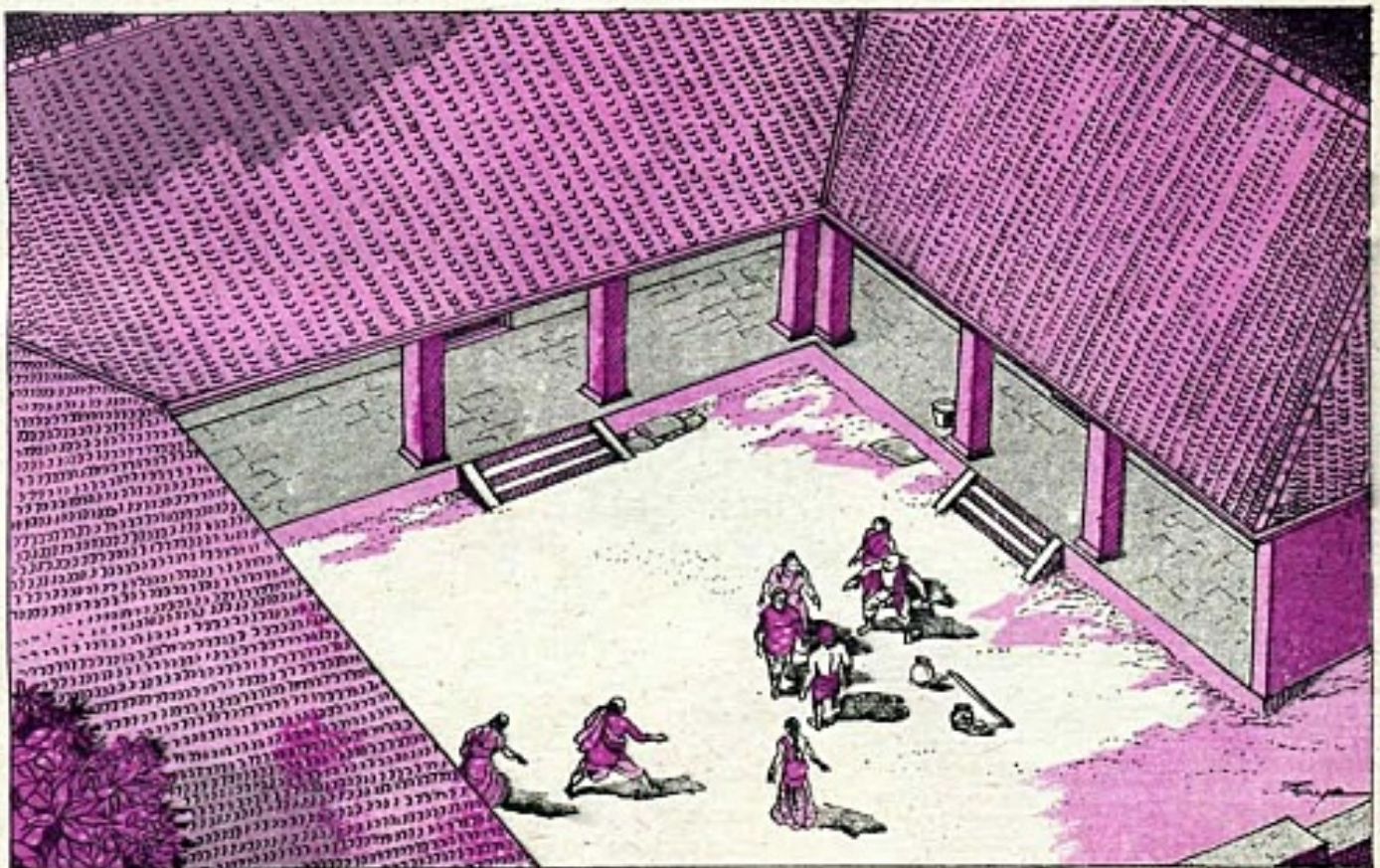
में गये थे, यह तो उसी की है। वीरभद्र को यह अंगूठी ताड़ीखाने में ही मिली थी।"

यह जवाब सुनने पर सबके चेहरे पीले पड़ गये। सबने उस अंगूठी को उलट-पलटकर देखा, तब बोले–"हम से तो भूल हो गई है। यह अंगूठी हमारी नहीं है।...मगर ठीक ऐसी ही अंगूठी हमारे पास है।...संदूक में रखकर भूल गये होंगे।" यों कहकर सब वहाँ से खिसक गये।

सब के जाने पर पार्वती खिल-खिलाकर हँस पड़ी। वीरभद्र ने पार्वती से पूछा–"सुनो, तुमने झूठ-मूठ यह क्यों कहा कि यह अंगूठी ताड़ीखाने में मिल गई है?"

"तुम तो निरे भोले और बुद्धू हो। लोगों की प्रकृति को तुम पहचान नहीं पाते। मैंने यह साबित करने के लिए झूठ बोल दिया कि यह अंगूठी इनमें से किसी की नहीं है। ये लोग तो प्रतिष्ठा के पीछे पागल होनेवाले हैं, ऐसी हालत में क्या यह कह सकते हैं कि ये लोग ताड़ीखाने में गये थे? इससे बढ़कर भयंकर पाप कर सकते हैं। इनका स्वार्थ देखने पर मुझे घृणा होती है। उल्टे ये लोग गरीबों को लालची बताते हैं। इस अंगूठी के सच्चे मालिक का पता लगने तक यह तो तुम्हारी ही है। इस मकान के अहाते में कई लोग आते-जाते रहते हैं। किसी के हाथ से छूट कर यह नीचे गिर गई होगी।" यों कहते पार्वती ने वह अंगूठी वीरभद्र के हाथ दे दी।

"हाँ, पार्वती, मैं बुद्धू हूँ। तुम जैसी अक़्लमंद लड़की का मुझे सहारा मिले तो तभी मैं इस दुनिया में ज़िंदा रह सकता हूँ। अगर तुम मान जाओगी तो मैं यह अंगूठी तुम्हारी उंगली में पहना दूँगा।" वीरभद्र ने मुस्कुराते हुए कहा।

पार्वती लजा गई, तब बोली–"हमारे बाबूजी से पूछ लेंगे।...पर यह पता नहीं चलता कि यह असली सोने की है या नहीं?"

"यह भले ही पीतल की अंगूठी क्यों न हो, मगर उसकी कृपा से मुझे असली सोना प्राप्त हुआ है।" वीरभद्र ने पार्वती की ओर प्यार भरी नज़र दौड़ाकर कहा।

गहनों का शौक

मंगीबाई का गहनों के प्रति पर बड़ा शौक है। वह हमेशा गहनों से लदी रहती है। चाहे दूसरों को जैसी भी जरूरत पड़े, वह अपने गहनों में से एक भी उधार न देती है। उन दिनों में मंगीबाई के बड़े भाई भानुप्रताप की बेटी की शादी पक्की हुई। भानुप्रताप बड़ा जमींदार है और धनवान भी। भानुप्रताप की बेटी की शादी में मंगीबाई भी शामिल हुई।

शादी का मुहूर्त निकट आया था। उस वक़्त भानुप्रताप ने मंगीबाई को अलग बुला ले जाकर पूछा—"बहन, मेरी एक मदद करो। यह उपकार करोगी तो मैं कभी उसे भूल नहीं सकता। बेटी के वास्ते शादी के गहने बनवाने के लिए मैंने पड़ोसी गाँव के सुनार को दस दिन पहले ही रुपये दे रखा है। मगर अभी तक वह गहने नहीं लाया है। मुहूर्त निकट पड़ता जा रहा है। बेटी के बदन पर सारे गहने पहनाये बिना विवाह की वेदी पर ले जाना अच्छा न होगा। लोगों के बीच हमारी इज्ज़त मिट्टी में मिल जाएगी। इसलिए तुम दुलहिन के बदन पर अपने गहने पहना कर तुम्हीं ख़ुद उसे विवाह की वेदी पर ले जाओ। शादी के ख़तम होते ही तुम अपने गहने ले सकती हो।"

पर मंगीबाई अपने गहने देना नहीं चाहती थी, इसलिए उसने यह बहाना करते हुए समझाया—"भैया, मेरे बदन पर के गहने अगर सोने के होते तो दुलहिन को पहनाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मगर मेरे सारे गहने खरे सोने के नहीं, बल्कि मुलम्मा चढ़ाये गये गहने हैं। शायद यह बात तुमको मालूम नहीं है। दुलहिन को मुलम्मा चढ़ाये गये गहने पहनाना अमंगलकारी है।" यों बड़ी

प्रमीला पाठक

चालाकी से झूठ बोलकर मंगीबाई ने अपने को बचा लिया।

भानुप्रताप ने मंगीबाई की बात को सच माना। वह इसके बदले कोई दूसरा इंतजाम करने की बात सोच ही रहा था कि इतने में सुनार ने आकर गहने दे दिये।

निश्चित मुहूर्त पर शादी निर्विघ्न संपन्न हुई। उस दिन रात को शादी में आये हुए सारे रिश्तेदार भानुप्रताप के घर पर ही रह गये। दूसरे दिन सवेरे ही सारे रिश्तेदार अपने गाँव चले गये।

शादी के दिन रात को मंगीबाई तथा उसकी दो रिश्तेदारिन एक कमरे में सो गईं।

आधी रात के वक़्त चोरों ने उस कमरे में प्रवेश किया। आहट पाकर मंगीबाई जाग उठी। तब चोरों ने छुरियाँ दिखाकर मंगीबाई और बाक़ी दो औरतों को धमकी दी कि चिल्लाओगी तो मार डालेंगे, तब उनके सारे गहने उतार कर चंपत हो गये।

चोरों के भागने तक मंगीबाई ने चूं तक नहीं की, लेकिन उनके जाते ही सर पर आसमान लेकर वह जोर से रोने-धोने लगी। उसके साथ बाक़ी दोनों औरतें भी चिल्ला-चिल्लाकर रोती रहीं।

रोने की आवाज़ सुनकर शादी में आये हुए सभी रिश्तेदार नींद से जाग पड़े।

भानुप्रताप यह चिल्लाहट सुनकर घबड़ा गया और दौड़ा-दौड़ा उस कमरे में पहुँचा। सारी हालत जानकर उन औरतों से समझाने के स्वर में बोला–"बहनो, तुम लोग चिंता न करो, मेरे घर में जो गहने चोरी गये हैं, उनका ब्यौरा दे दो, मैं ऐसे ही गहने बनवा कर तुम दोनों को दे दूंगा।" फिर अपनी बहन की ओर मुड़कर बोला–"बहनजी! तुम्हारे गहनों जैसे इन लोगों के गहने भी मुलम्मे चढ़ाये गये होते तो मैं नाहक़ इस ख़र्च से बच जाता।"

यह जवाब सुनने पर मंगीबाई का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसके मुँह से बात तक न निकली, वह अपने भाई के चेहरे की ओर देखती ही रह गई।

राजा हरिश्चन्द्र ने नरमेध यज्ञ शुरू किया, आखिर विश्वामित्र की कृपा से उसका अंत हुआ। एक दिन इन्द्र को देखने ऋषि वसिष्ठ और विश्वामित्र दोनों पहुँचे। वसिष्ठ की देह पर कई पदक देख विश्वामित्र आश्चर्य में आ गये। उन्होंने वसिष्ठ से पूछा–"महाशय, किसने आप का यह अपूर्व सम्मान किया है?"

वसिष्ठ अभिमान पूर्ण प्रसन्नता के साथ बोले–"मित्रवर, चन्द्रमा जैसे सत्य हरिश्चन्द्र हमारे शिष्य जो ठहरे! उनकी समता कर सकनेवाले राजा इस संसार भर में दूसरा है ही कौन? उन्होंने राजसूय यज्ञ करके अपार दक्षिणाओं के साथ मेरा सत्कार किया है। सत्य वचन कहने में, दान देने में, शौर्य और पराक्रम में, धर्म का आचरण करने में भी किसी भी युग में, इन चौदह लोकों के बीच हरिश्चन्द्र की बराबरी करनेवाला राजा और कोई नहीं है।"

वसिष्ठ के द्वारा हरिश्चन्द्र की अपार प्रशंसा सुनते ही विश्वामित्र का क्रोध खौल उठा। उन्होंने गरजकर कहा–"आप एक झूठे, दंभी और दगेबाज की यों बढ़ा-चढ़ाकर तारीफ़ क्यों करते हैं? क्या उस हरिश्चन्द्र ने वरुण को धोखा नहीं दिया? मैं दाँव लगाकर यह साबित कर सकता हूँ कि हरिश्चन्द्र मिथ्यावादी है, दुष्ट है, वह दानी नहीं है। अगर मैं इस प्रकार साबित न कर पाऊँगा तो समझ लो, मेरा सारा पुण्य नष्ट हो जाएगा। अगर साबित

२६. हरिश्चन्द्र की यातनाएँ

करूँ तो क्या तुम इसे मानने के लिए तैयार हो कि तुम्हारा सारा पुण्य नष्ट हो जाए?"

इसके बाद इस बात को लेकर दोनों ऋषियों के बीच वाद-विवाद चला। दोनों होड़ लगाकर अपने-अपने आश्रम को लौट गये।

एक दिन जंगल में टहलते हुए हरिश्चन्द्र ने एक स्त्री को देखा। वह भयंकर रूप से विलाप कर रही थी। उस पर रहम खाकर हरिश्चन्द्र ने पूछा—"तुम इस भयंकर जंगल में क्यों आ गई हो? तुम्हारे पति कौन हैं? मेरे राज्य में कोई भी दुष्ट और राक्षस तो नहीं हैं, तुम्हें दुख देनेवाले का नाम बतला दो, मैं उसका अंत कर डालूँगा।"

इस पर उस युवती ने यों जवाब दिया—"हे राजन, विश्वामित्र नामक एक मुनि मुझे पाने के वास्ते तपस्या करते हुए सता रहे हैं!"

"तुम चिंता न करो! तुम्हें अपनी तपस्या के द्वारा सतानेवाले विश्वामित्र की तपस्या बंद करवा दूँगा।" यों उस युवती को वचन देकर हरिश्चन्द्र विश्वामित्र के आश्रम में पहुँचे और बोले—महा मुनिजी! आप तपस्या करके क्यों नाहक़ दूसरों को सताते हैं? मेरे राज्य में इस प्रकार पाप पूर्ण विचार को लेकर कोई भी लोक-पीड़ा के वास्ते तपस्या नहीं कर सकते! आप यह तपस्या बंद कीजिए! इसके द्वारा आप को न पुण्य प्राप्त होता है और न पुरुषार्थ ही?"

इस पर विश्वामित्र उस प्रदेश को छोड़ और कहीं चले गये। इसके पहले विश्वामित्र का वसिष्ठ के साथ झगड़ा हुआ था, अब हरिश्चन्द्र ने उनकी तपस्या को रोकने का आदेश दिया। इस पर उनका क्रोध और भड़क उठा। उन्होंने हरिश्चन्द्र को धोखा देने का निश्चय किया और एक राक्षस को सुअर के रूप में उनके पास भेजा। उस सुअर ने हरिश्चन्द्र के उद्यान में पहुँचकर वहाँ के मालियों

तथा राजभटों को डराया, तब उद्यान के फल-फूलों के पौधों को नष्ट कर दिया। मालियों ने उस पर तीर चलाये, फिर भी वह विचलित न हुआ। तब जाकर मालियों ने सोचा कि यह कोई साधारण सुअर नहीं है और उन लोगों ने राजा को इसकी खबर दी।

हरिश्चन्द्र घोड़े पर सवार हो कुछ सैनिकों को साथ ले उद्यान में पहुँचे, दूर पर गुर्रानेवाले सुअर तथा तहस-तहस हुए पौधों को देख वे अपने क्रोध पर क़ाबू न कर पाये। सुअर पर उन्होंने बाणों की वर्षा की, पर सुअर मरा नहीं, वह कभी दिखाई देता, कभी गायब होता, इस तरह उस सुअर ने हरिश्चन्द्र को नाना प्रकार की यातनाएँ दीं। आखिर वह जंगल की ओर भाग गया। हरिश्चन्द्र ने उसका पीछा किया।

जंगल में एक जगह झरना दिखाई दिया, वहाँ पर पहुँचते ही सुअर गायब हो गया। हरिश्चन्द्र ने अपने घोड़े को पानी पिलाया और वे अपनी राजधानी को लौटने का रास्ता ढूँढ़ ही रहे थे, तब विश्वामित्र वहाँ पर एक वृद्ध ब्राह्मण के रूप में आ पहुँचे। हरिश्चन्द्र ने उन्हें प्रणाम किया, विश्वामित्र ने उन्हें आशीर्वाद देकर पूछा—"आप राजा हैं, ऐसी हालत में आप को इस निर्जन प्रदेश में अकेले आने की क्या ज़रूरत है?"

हरिश्चन्द्र ने वृद्ध ब्राह्मण के रूप में स्थित विश्वामित्र को सुअर का वृत्तांत सुनाकर पूछा—"मैं वापस लौटने का रास्ता नहीं जानता! कृपया बता दीजिए।"

विश्वामित्र ने कहा—"राजन, यह एक पुण्य तीर्थ है, इसमें स्नान करके पितृ देवताओं को तर्पण देकर यथाशक्ति दान देना होगा। तब मैं आप के पीछे थोड़ी दूर तक चलकर रास्ता बतला दूँगा।"

हरिश्चन्द्र ने कहा—"महात्मा, आप जो भी चीज़ मांगे, सो मैं दे दूँगा। बताइये, आप क्या चाहते हैं? सोना, घोड़े, जमीन,

धन या और कोई चीज़? मैंने राजसूय यज्ञ के समय यह प्रतिज्ञा ले ली कि कोई जो भी चीज़ मांगे, सो दे दूंगा!"

"राजन, आप तो एक महान व्यक्ति हैं! मैंने वसिष्ठ के मुंह से सुना है कि आप सूर्य वंश में राजा त्रिशंकु के पुत्र के रूप में जन्म लेकर यह साबित कर चुके हैं कि ऐसे महान राजा कोई दूसरा नहीं हैं! वे क्या कभी झूठ बोल सकते हैं? आप महान दाता हैं! इस पृथ्वी भर के राजा हैं! इसलिए मेरे पुत्र का विवाह करवा दीजिए!" विश्वामित्र ने कहा।

इसके बाद विश्वामित्र अमनी माया के बल पर दस साल की एक लड़की तथा एक युवक की सृष्टि करके ले आये और बोले-"ये ही विवाह योग्य वर-वधू हैं! इनका विवाह करने पर आप को राजसूय यज्ञ से भी अधिक फल प्राप्त होगा।"

हरिश्चन्द्र ने मान लिया। विश्वामित्र के द्वारा दिखाये गये रास्ते पर चलकर अपनी राजधानी को पहुंचे।

विश्वामित्र अपने आश्रम को लौट गये। उन वधू-वरों का विवाह करके हरिश्चन्द्र को देखने गये। उस वक़्त हरिश्चन्द्र अग्नि-गृह थे।

वृद्ध ब्राह्मण के रूप में उपस्थित विश्वामित्र ने कहा-"मैं ठीक वक़्त पर पहुँच गया हूँ। मुझे दान का जो वचन दिया, वह दे दीजिए।"

"आप जो भी माँगे, दे दूंगा। अपनी इच्छा बता दीजिए।" हरिश्चन्द्र ने पूछा।

"आप के सामने स्थित अग्नि होत्र को साक्षी बना कर आप अपने सारे राज्य के साथ हाथी, घोड़े आदि सारी संपत्ति मुझे दान कर दीजिए!" विश्वामित्र ने कहा।

हरिश्चन्द्र ने बिना आगा-पीछे सोचे कह दिया-"हाँ, मैंने दे दिया है!"

इस पर विश्वामित्र बोले-"बिना दक्षिणा वाला दान व्यर्थ होता है। इसलिए इस दान के योग्य दक्षिणा भी देकर कृतार्थ हो जाइये।"

"दशिणा कितनी मात्रा में होगी?" हरिश्चन्द्र ने पूछा।

"चालीस मन सोना दक्षिणा के रूप में दीजिए!" विश्वामित्र ने पूछा।

विश्वामित्र का यह कपट देख हरिश्चन्द्र को आश्चर्य हुआ। राज्य सौंपने के बाद दक्षिणा भी माँगी तो राजा ने भोले बनकर देने का वचन दे दिया। सारी संपत्ति दान कर चुकने के बाद चालीस मन सोना वे कहाँ से ला सकते हैं? दुर्भाग्य नहीं तो, कहीं तपस्या करने वाले धन के लोभ में पड़कर यों धोखा दे सकते हैं?"

अपने पति को चिंता में डूबे देख रानी शैव्या ने इसका कारण पूछा। तब हरिश्चन्द्र ने संक्षेप में सारा बृत्तांत सुनाकर रात को खाना तक बंद किया।

सवेरा होते ही विश्वामित्र आ पहुँचे और बोले—"आप इस राज्य को छोड़कर कहीं चले जाइये, लेकिन मुझे दक्षिणा जल्दी दे दीजिए!"

"मैंने अपने राज्य के साथ सारी संपत्ति आप के हाथ सौंप दी। इस बक़्त मैं दक्षिणा चुकाने की हालत में नहीं हूँ। मुझे थोड़ा समय दीजिए।" हरिश्चन्द्र ने विश्वामित्र को समझाया। तब अपनी पत्नी और पुत्र को देख बोले—"अब हमें यहाँ रहना नहीं चाहिए! चलो।"

इसके बाद वे तीनों खाली हाथ चल पड़े। अपने राजा के प्रति जो अन्याय हुआ, उसे देख राज्य के सभी नागरिक दुखी हुए और रोते हुए सब ने विश्वामित्र की निंदा की।

राज्य को छोड़ चले जाने वाले राजा के पीछे पड़कर विश्वामित्र बोले—"आप मेरी दक्षिणा दे दीजिए। अगर आप से नहीं बनता, तो साफ़ कह दीजिए कि मैं नहीं दे सकता। मैं आइंदा आप को तंग नहीं करूँगा। अगर आप चाहेंगे तो आप ने मुझे जो कुछ सौंप दिया, सब वापस कर दूंगा। ऐसा न होकर अगर आप अपने वचन का पालन करना चाहते हैं, तो मेरा सोना मुझे दे दीजिए।"

"महाशय, मैं जरूर आप का ऋण चुकाऊँगा! वरना मैं खाना तक नहीं खाऊँगा! वचन भंग होने पर क्या सब कोई मुझ पर नहीं थूकेंगे? आप थोड़ा समय दे और भगवान की कृपा मेरे अनुकूल रही, तो मुझे ज्यों हीं धन प्राप्त होगा, त्यों ही मैं आप का ऋण चुका दूंगा!" हरिश्चन्द्र ने समझाया।

इस पर विश्वामित्र बोले-"राजन्, आप बेतुकी बातें मत कीजिएगा! आप को अब धन कहाँ से मिल सकता है? समस्त धन का मूल आप के लिए यह राज्य था, जो अब मेरा हो चुका है! यों आप अंट-संट जवाब न देकर झूठ मत बोलियेगा! साफ़ कह दीजिएगा कि मैं नहीं दूंगा, तब मैं आप से माँगूंगा तक नहीं; फिर आप की जैसी मर्जी!"

ये बातें सुनने पर हरिश्चन्द्र रोष में आ गये। बोले-"क्या मैं झूठ बोल रहा हूँ? धन के बारे में आप संदेह ही क्यों करते हैं? मैं अपना शरीर बेचकर ही सही, आप का सोना दे दूंगा। मुझे सताने की ज़रूरत नहीं है। हम तीन स्वस्थ आदमी हैं। अगर हमें खरीदनेवाला कोई व्यक्ति इस अयोध्या के अंदर है, तो पता लगा लीजिए! वरना काशी में हम अपने को बेचकर आप की दक्षिणा चुकायेंगे।" यों समझाकर हरिश्चन्द्र आगे बढ़े।

इसके बाद सब लोग काशी पहुँचे। हरिश्चन्द्र ने गंगाजी में स्नान किया, तर्पण देकर अपने साथ ब्राह्मण के रूप में चलनेवाले विश्वामित्र से बोले-"महाशय, हम में से किसी एक को बेचकर अपना ऋण वसूल कर लीजिए।"

"एक महीने से मुझे अपने साथ खींच ले जा रहे हैं। क्या यह आप के लिए उचित है? मेरी दक्षिणा देकर तब आप यहाँ से आगे बढ़िये। तभी आप का यश बना रहेगा।" विश्वामित्र ने कठोर शब्दों में कहा।

"महानुभाव! अभी तक महीना पूरा नहीं हुआ। शाम तक समय है। थोड़ा
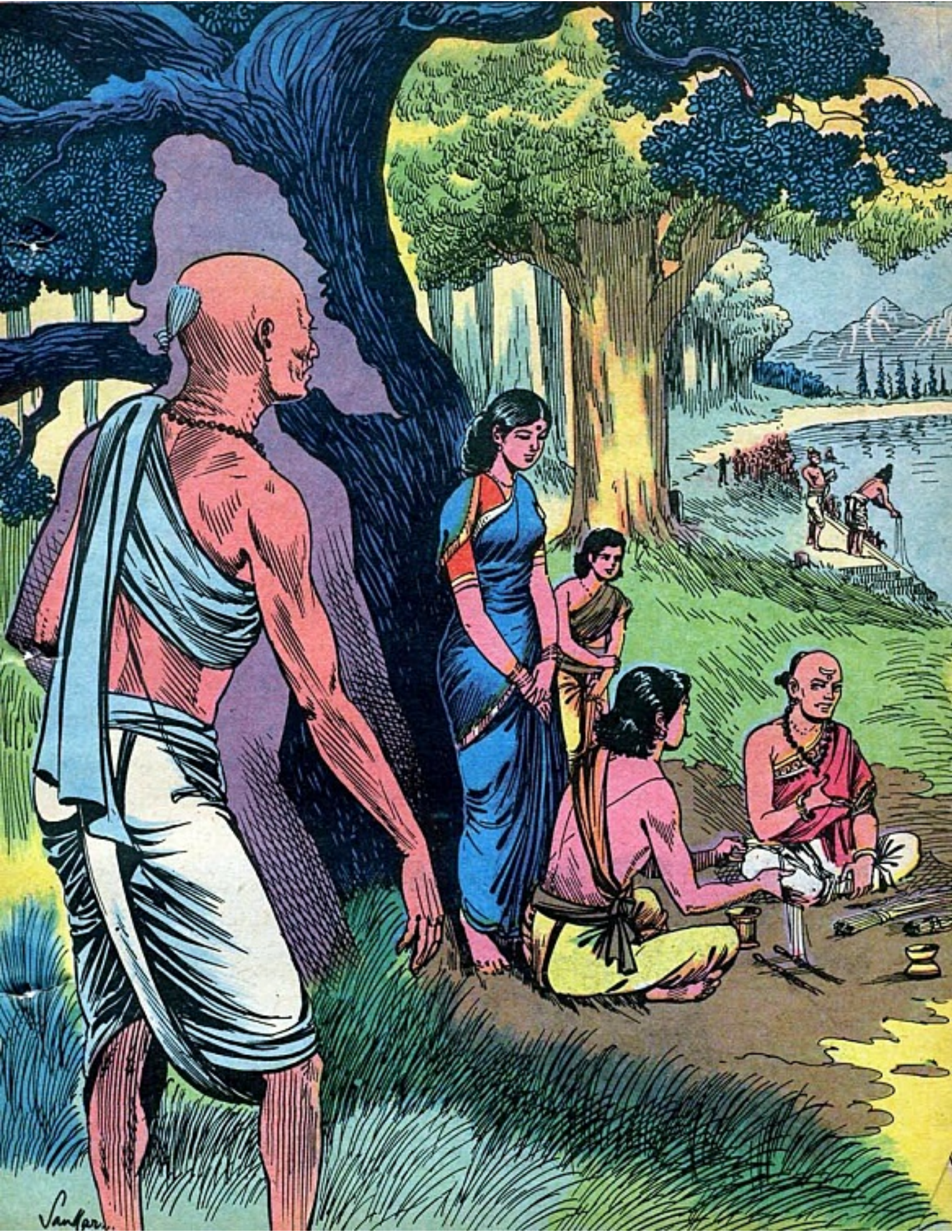
रुक जाइयेगा तो मैं आप का ऋण चुका देता हूँ।" हरिश्चन्द्र ने जवाब दिया।

"मैं थोड़ी देर बाद लौट आता हूँ। तब आप ने मेरा ऋण नहीं चुकाया तो मैं आप को शाप दे दूँगा।" यों धमकी देकर विश्वामित्र चले गये।

विश्वामित्र की बातें सुन हरिश्चन्द्र पशोपेश में पड़ गये। उनके हाथ फैलाने पर धन देनेवाले मित्र कई हैं, मगर वे हाथ फैलाकर दान नहीं माँग सकते, ऐसा न होकर ब्राह्मण का ऋण चुकाये बिना यदि वे मर गये तो ब्राह्मण के धन का अपहरण करने के अपराध में उन्हें एक कीड़े के रूप में जन्म लेना होगा। इसलिए उन्हें खुद किसी के हाथ बेच देने के सिवाय दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

यों विचार में डूबे हुए अपने पति हरिश्चन्द्र को देख शैब्या बोली–"महाराज, सत्य वचन के समान कोई दूसरा पुण्य न होगा! जो अपने वचन का भंग करता है, वह एक पिशाच के समान होता है। आप सत्य का पालन कीजिए। राजा ययाति ने सौ अश्वमेध यज्ञ किये, इसके बाद राजसूय यज्ञ भी संपन्न किया, इसके परिणाम स्वरूप वे स्वर्ग में चले गये, लेकिन एक झूठ बोलने के अपराध में वे दुर्गति को प्राप्त हुए, ऐसा कहा जाता है।"

इस पर हरिश्चंद्र बोले–"तुम कुछ कहना चाहती हो, छिपाओ मत! साहस के साथ बतला दो।"

तब शैब्या बोली–"पत्नी तो संतान के वास्ते होती है। मेरे द्वारा आप को वह फल मिल गया है। इसलिए मुझे किसी के हाथ बेचकर उस ब्राह्मण का ऋण क्यों नहीं चुका देते?"

शैब्या के मुँह से ये बातें सुनने पर हरिश्चन्द्र का दुख फूट पड़ा। सदा प्रिय वचन बोलकर उन्हें प्रसन्न करनेवाली धर्मपत्नी के मुँह से ऐसे कठोर वचन सुनना पड़ रहा है। यह दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है? इसके बाद दुखातिरेक में हरिश्चन्द्र बेहोश हो गये।

प्रायश्चित्त

प्राचीन काल में कैरो नगर में एक जौहरी रहा करता था। उसकी उम्र क़रीब बीस साल की थी। उसकी दूकान में अकसर औरतें ही जाया करती थीं। युवक को इस बात का डर था कि शायद वह औरतों के मोहजाल में फंस जाय, इसलिए वह उनकी ओर आंख उठाकर देखा न करता था। उसके इस व्यवहार को देख सब कोई उसकी तारीफ़ करते थे।

एक दिन उसकी दूकान में एक नीग्रो गुलाम लड़की आई। उसने पूछा—"क्या अमुक आदमी की दूकान यही है? दूकानदार आप ही हैं?" दूकानदार के 'हां' कहने पर उस लड़की ने इधर-उधर झांककर उसके हाथ एक चिट रख दिया। चिट को पढ़ने पर दूकानदार को एक साथ क्रोध और आश्चर्य भी हुआ। क्योंकि उसमें एक प्रेम गीत लिखा हुआ था। अंतिम चरण में गीत लिखनेवाली युवती का नाम भी लिखा हुआ था।

जौहरी ने चिट फाड़कर फेंक दिया। जवाब का इंतज़ार करनेवाली गुलाम लड़की को ख़ूब गालियां सुनाकर दूकान से बाहर ढकेल दिया। इस घटना को देख चारों तरफ़ के लोगों ने उस जौहरी की बड़ी तारीफ़ की—"ओह, यह भी कैसे चरित्रवान हैं?"

दो-तीन साल बीत गये। जौहरी के मन में यह इच्छा पैदा हुई कि कोई अच्छी कन्या मिले तो शादी कर ले? तब से वह बराबर इस बात का इंतज़ार करने लगा कि उसकी दूकान में आनेवाली युवतियों में से किसी सुंदर और बुद्धिमती कन्या को चुन ले।

एक दिन उसकी दूकान में पांच-छे गोरी गुलाम औरतों को साथ ले एक

२५ साल पूर्व चन्दामामा की कहानी

युवती आई। उसने पूछा—"इस दूकान में कोई अच्छे गहने हैं?"

दूकानदार के 'हाँ' कहने पर उस युवती ने सोने के पांजेब दिखाने को कहा। एक गुलाम स्त्री ने उस युवती के लहंगे के किनारे को ऊपर उठाकर उसके पैर का प्रदर्शन किया। उस-छोटे पैर को देख दूकानदार चकित रह गया, उसने कहा—"मेरे पास जो छोटे से पांजेब हैं, वे भी तुम्हारे पैरों के लिए बड़े हैं। फिर कैसे?"

"आप यह क्या कहते हैं? लोग मेरे पैरों को हाथी के पैरों के समान जो बताते हैं?" युवती ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"कौन कहता है? उनकी आँखें आंधी हो जायें! उफ़! ये तो छोटे से बुलबुल के जैसे पैर हैं!" दूकानदार ने कहा।

"अच्छा, यह बताइये कि क्या हाथों में पहने जानेवाले कंगन है?" युवती ने पूछा। इसके बाद एक गुलाम औरत ने उसके हाथों पर से वस्त्र हटाया तो उसे देख दूकानदार विस्मय में आ गया।

"मेरे पास छोटे से छोटा जो कंगण है, वह भी तुम्हारे हाथों के लिए बड़ा हो जाएगा।" दूकानदार ने जवाब दिया।

"अरे लोग तो कहते हैं कि मेरी उंगलियाँ केलों जैसे तथा हाथ हाथी की सूंडों जैसे होते हैं। युवती ने कहा।

"ऐसी बातें कहनेवालों का सर्वनाश हो जाए! हे सुंदरी, तुम जैसी रूपवती इन तीनों लोकों में नहीं है। तुम मुझसे विवाह करके मुझे धन्य बनाओ।" इन शब्दों के साथ दूकानदार ने उस सुंदरी के सामने घुटने टेककर आँसू भरकर पूछा।

युवती मुस्कुराकर बोली—"मेरे बापू कैसे मुझ पर गुस्सा करते हैं, जानते हैं? कहते हैं कि मेरा चेहरा विकृत है, मेरे चेहरे पर चेचक के दाग हैं। मेरे साथ कोई भी शादी करने को तैयार न होगा। ऐसी हालत में जब आप मुझ को सुंदर मानते हैं, तो मुझे बड़ी ख़ुशी होती है।"

"तुम्हारा बापू पागल होगा। उनका नाम बतला दो, मैं उनके पास जाकर इस बात की क़सम खा लूंगा कि मैं तुम्हारे साथ शादी करने को तैयार हूँ।" दूकानदार ने कहा।

"उस व्यक्ति का नाम शेख अलइस्लाम है, वे इस नगर के व्यापारियों में मशहूर हैं। आप मेरे साथ शादी करने की बात कहेंगे तो वे जल्दी मानेंगे नहीं, मेरी बदसूरत का बखान कर आप को घबड़ा देंगे। आप को बराबर यही कहना होगा, 'मुझे स्वीकार है' 'मुझे पसंद है।'" युवती ने समझाया।

"मैं उनसे कब मिल सकता हूँ?" दूकानदार ने पूछा।

"कल दस बजे।" यों कहकर वह युवती गुलामों को साथ ले चली गई।

दूसरे दिन सवेरे जौहरी शेख अल इस्लाम के मकान का पता लगाकर वहाँ पर पहुँचा। अल इस्लाम ने युवक की इच्छा जानकर उदासपूर्ण चेहरा बनाकर कहा–"बेटा, शायद तुम मेरी लड़की की बाबत कुछ नहीं जानते। वह तो एक अभागिन है। उसे दिन में देखोगे तो रात में सपने में देख डर जाओगे।" यों अपनी बेटी की बदसूरत का वर्णन सुनाया। पर युवक बराबर यही कहता रहा–'मुझे पसंद है! मुझे पसंद है!'

आखिर अल इस्लाम ने उस युवक के साथ अपनी कन्या का विवाह करने को

चेहरे पर के घूंघट को हटाकर देखा। तब उसका कलेजा कांप उठा। वधू कुरूपिनी थी। इसके पहले दूकान में आकर गहनों का सौदा करनेवाली युवती यह नहीं थी।

जौहरी यह समझ न पाया कि उसके साथ यह कैसा अन्याय हुआ है, वह सीधे अपने घर लौट आया। दूसरे दिन वह अपनी दूकान में चिंतामग्न बैठा हुआ था, तब वही पूर्व सुंदरी अपनी गुलाम औरतों के साथ प्रवेश करके बोली–"वर का कल्याण हो, वह सुखी हो!"

इस पर युवक उस युवती को गालियाँ सुनाने लगा, युवती ने अचरज में आकर पूछा–"मैंने जो गीत और नीग्रो गुलाम को भेजा था, वे बातें अच्छी तरह से याद हैं न?" इसके बाद जब वह उठकर जाने को हुई, तब युवक उसके पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाने लगा–"मेरी अक़्ल ठिकाने लग गई है! मुझे किसी तरह से इस नरक से उबार लो।"

युवती को जौहरी पर रहम आई, उसे कोई उपाय बताकर चली गई। उसके कहे अनुसार जौहरी उचित इंतज़ाम करके सीधे अपने ससुर अल इस्लाम के घर पहुँचा। वहाँ पर ससुर व दामाद बरामदे में बैठे हुए थे, तब किवाड़ ढकेलकर कई

मान लिया। युवक के हाथ सम्मति पत्र लिखवाकर गवाहों के हस्ताक्षर करवाये। उस पत्र में यों लिखवाया–'वधू को वर सभी प्रकार की तृटियों व खामियों के बावजूद भी अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर रहा है, अगर वह उसे तलाक देना चाहे तो वधू को बीस हजार दीनार सोना चुकायेगा।'

इसके बाद अल इस्लाम ने बताया–"बेटा, वधू रोगी है। वह खाट पर से उतर नहीं सकती, इसलिए शादी यहीं पर होगी।" इस शर्त को भी जौहरी ने मान लिया। शादी खतम हुई। जौहरी ने अपनी पत्नी के कमरे में जाकर उसके

लोग अन्दर आ पहुँचे। उनमें से कुछ लोग ढफलियाँ बजा रहे थे, कुछ लोग सीठियाँ बजाने लगे। कुछ लोगों ने छलांगे मारना शुरू किया। कुछ लोग बंदर और भालुओं को खिलाने लगे।

अल इसलाम ने उठकर चिल्लाते हुए कहा–"यह तुम लोगों ने कैसा शोरगुल मचा रखा है? इसे बंद करो।" मगर वे लोग तब तक अपने खेल-तमाशे करते रहे, जब तक जौहरी ने उन्हें बन्द करने को नहीं कहा।

इसके बाद वह युवक अल इस्लाम की ओर मुड़कर बोला–"ससुरजी, ये सब मेरे रिश्तेदार और दोस्त हैं। मेरी शादी की बात सुनकर कौतुक करने आये हैं! बस, यही बात है!"

अल इसलाम का चेहरा स्याह पड़ गया, वह बोला–"अरे, ये लोग तुम्हारे रिश्तेदार हैं? यदि मुझे पहले ही मालूम हो जाता तो तुम्हारे साथ मेरी लड़की की शादी न करता!"

"मुझसे पूछ लिये होते तो ज़रूर बता दिया होता!" युवक ने जवाब दिया।

"मेरे न पूछने पर भी तुम्हें बताना चाहिए था! इसलिए तुमने जो शर्तनामा लिखकर दिया, वह किसी काम का नहीं है? मैं उसे नहीं मानता।" अल इस्लाम ने कहा।

"मैं अपनी औरत को कभी नहीं छोड़ सकता! मैं भी देखूंगा कि आप मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं?" युवक ने क्रोध का अभिनय करते हुए कहा।

अल इस्लाम घबड़ाकर बोला–"बेटा, मेरी इज्जत बचाओगे तो अल्लाह तुम्हारा भला करेगा! तुम मेरी लड़की को तलाक दे दो।"

युवक तलाक देकर बाहर इस तरह चला आया, मानों उसने विवश होकर तलाक दे दिया हो। इसके बाद उसने अपनी पूर्व सुंदरी के साथ शादी की। जब उसे मालूम हुआ कि वह कैरो के सुलतान की निकट रिश्तेदारिन है, तब उसकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां फ़रवरी १९८१ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

I. Uma Rani

★

K. Sitharam

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ दिसम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अक्तूबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **रात बनी उजियारी!**

द्वितीय फोटो : **बना राष्ट्र का प्रहरी!!**

प्रेषक : **उमाकांत शर्मा,** सेंट्रल बैंक आफ़ इंडिया, तोशाम-१२५०४० (हरियाणा)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

अपनी आँखें बंद करो और जो चाहो माँगो
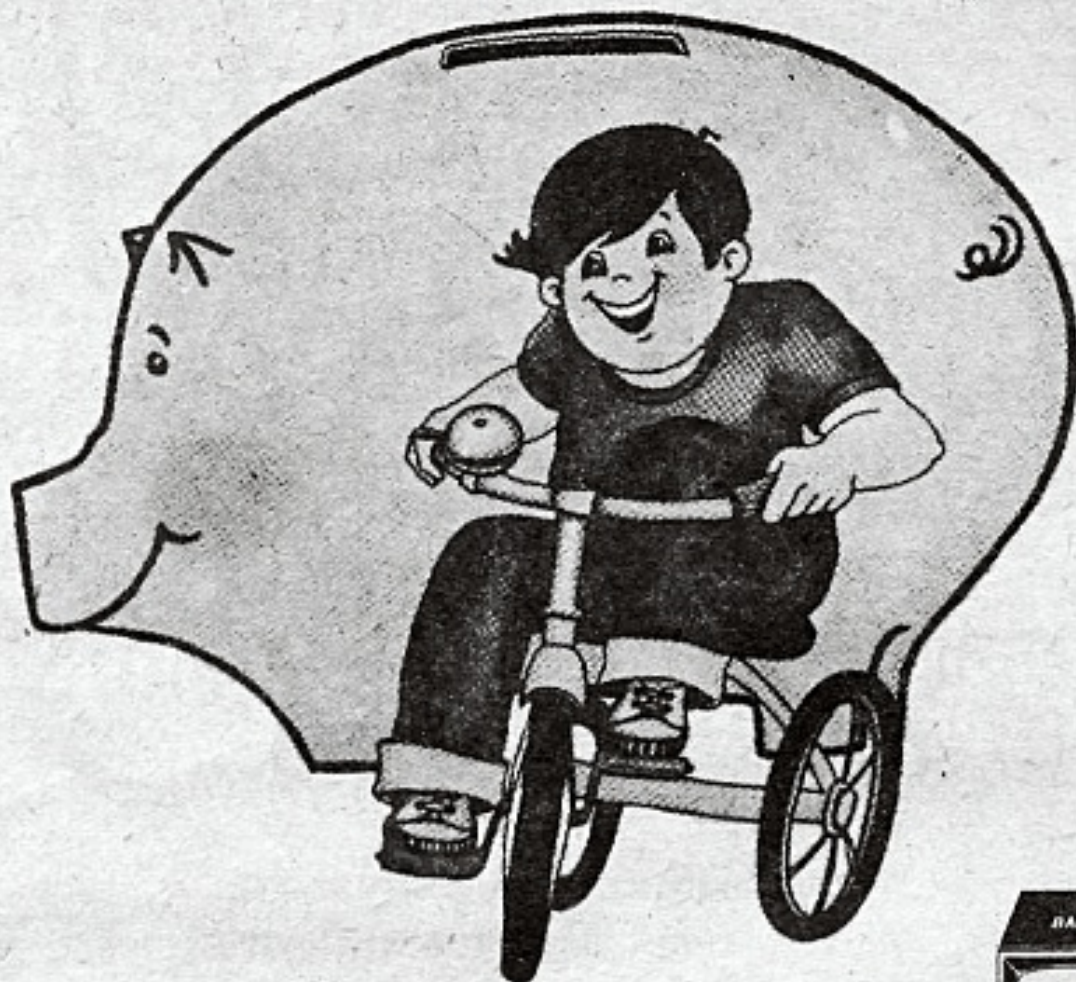
तुम जो चाहोगे, वो मिलेगा बशर्ते बचत करो. तुम खुद अपने पैसों से साइकिल, खिलौने या गुड़िया, जो चाहो खरीद सकते हो. केनरा बैंक की बालक्षेम जमा योजना तुम्हारे लिए ही है.

बालक्षेम के सुंदर से चाबीवाले गुल्लक में तुम पैसे जमा करते जाओ– भर जाने पर केनरा बैंक में जाकर अपने पैसे जमा करा दो. और फिर गुल्लक भरना शुरू कर दो. तुम्हारी रकम बढ़ती ही जायेगी क्योंकि हम उसमें पैसे मिलाते जायेंगे. जल्द ही इतनी रकम जमा हो जायेगी कि तुम मनचाही चीज़ें खरीद सकोगे.

अधिक जानकारी के लिए केनरा बैंक की अपनी नज़दीकी शाखा में चले आओ. हमारी अन्य विशेष योजनाएं हैं: कामधेनु, विद्यानिधि और निरन्तर.

बालक्षेमा जमा योजना

केनरा बैंक

(एक राष्ट्रीयकृत बैंक)

देशभर में 1,200 से भी अधिक शाखाएँ.

maa CB 4 Hin 80

'असली निशाना'

रसीली
प्यारी
मज़ेदार

फलों की स्वादवाली गोलियां

५ फलों के स्वाद-
रासबेरी, अनानास, नींबू, नारंगी व मौसंबी.

everest/80/PP/309-hn.